

चेतना



लोकनिधि मन्त्रालय

तृतीय अंक

अगस्त, १९६०

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) II, बिहार, पटना
का कार्यालय

“अनन्तनामधेयाय सर्वकारविधायिने ।

समस्तमन्त्रवाच्याय विश्वैकपतये नमः ॥”

अर्थात्

“जिसके अनन्त नाम हैं, जो सृष्टि की सब प्रकार की आकृतियों
का रचयिता और समस्त मन्त्रों द्वारा वाच्य है ऐसे,
विश्व के एकमात्र स्वामी को
नमस्कार है ।”

चेतना



तृतीय अंक

अगस्त, १९६०

महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) II, बिहार, पटना
का कार्यालय

चे
त
ना
प
रि
वा
र

संरक्षक



श्री नरेन्द्र सिंह,

महालेखाकार (ले० एवं ह०) II, बिहार, पटना

परामर्शदातृ समिति

:

श्री राजीव भूषण सिन्हा,

उप महालेखाकार (ले० एवं ह०) II, बिहार, पटना

श्री पो० के० मिश्र,

उप महालेखाकार (ले० एवं ह०) II, बिहार, पटना

श्री राजेन्द्र प्रसाद शास्त्री,

लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

श्री जगदीश प्रसाद,

लेखा अधिकारी, बिहार, पटना

प्रधान संपादक

:

श्री सतीश चन्द्र सिन्हा,

लेखा अधिकारी (हिन्दी कक्ष), बिहार, पटना

संयुक्त संपादक

:

डॉ० जितेन्द्र कुमार,

अनुभाग अधिकारी (हिन्दी कक्ष), बिहार, पटना

०३३१, ११/११/८६

कोड एफिफ

अनुभाग, ग्राहकी, II (गिन्तकह इष्ट तर्ल) प्रकाशलेखन
प्रलोभाक त्र

सम्पादकीय

हिन्दी भारत की राजभाषा है। यह कोटि-कोटि भारतवासियों की भाषा है। यह प्रेम और सौहार्द की भाषा है तथा समग्रता की कड़ी है, सम्पर्क सूत्र है, देश की पावनमयी पुण्यसलीला गंगा है। भारत के उत्तर और दक्षिण अंचलों का सेतु हिन्दी ही है। अतः हिन्दी के दिनानुदिन प्रचार और प्रसार की परमावश्यकता है। इसी उद्देश्य से इस कार्यालय से हिन्दी की यह पत्रिका "चेतना" प्रकाशित की गयी है। आपके समक्ष पत्रिका "चेतना" का यह तृतीय अंक प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। इसे प्रकाशित कराने में हमारे तत्कालीन माननीय महालेखाकार महोदय श्री एस० एस० मान का बड़ा योगदान रहा है। अहिन्दीभाषी होते हुए भी हिन्दी के प्रति उनका रुझान अत्यन्त सराहनीय रहा है। हम उनके प्रति अत्यन्त आभारी हैं।

साथ ही यह अपार हर्ष का विषय है कि पत्रिका के संरक्षक श्री नरेन्द्र सिंह, महालेखाकार (लेखा एवं हकदारी) II, बिहार, पटना राष्ट्रभाषा हिन्दी के अनन्य प्रेमी हैं। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि आपके स्नेह से कार्यालय में हिन्दी का प्रयोग दिनानुदिन बढ़ता ही जाएगा। युवा एवं कर्मठ उप महालेखाकार (प्रशासन) श्री राजीव भूषण सिन्हा के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने इस पत्रिका के प्रकाशन में पूरी दिलचस्पी दिखायी है।

पत्रिका में जिन बन्धुओं ने अपनी रचनाएँ दी हैं, हम उनके आभारी हैं। परामर्शदातृ समिति के सदस्यों के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने कृपापूर्वक अपना बहुमूल्य सुझाव देकर पत्रिका के स्तर को बढ़ाया है। इस कार्यालय के श्री नरेन्द्र कुमार सिंह "नाहर" लेखाकार, निधि (आर० भी०) एवं "हिन्दी कक्ष" के डॉ० जितेन्द्र कुमार का मैं हादिक धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने पत्रिका के प्रकाशन में पूरी निष्ठा एवं तत्परता दिखाई है।

पत्रिका के प्रकाशन में "बिहार राज्य शिक्षक संघ सहयोग लिमिटेड, एकजीविशन रोड, पटना-800 001" के बन्धुओं ने अपार सहयोग दिया है। हम उनके भी आभारी हैं। साथ ही आशा करते हैं कि उनका सहयोग सदा बना रहेगा।

पत्रिका का यह अंक हिन्दी-प्रेमियों के लिए लघु भेंट के रूप में समर्पित है। सहृदय पाठकों से साग्रह अनुरोध है कि वे पत्रिका के सन्दर्भ में बहुमूल्य सुझाव भेजकर हमें अनुगृहीत करें।

सतीश चन्द्र सिन्हा,

लेखा अधिकारी, हिन्दी कक्ष

“चेतना” का द्वितीय अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका में प्रकाशित सभी सामग्री उच्चस्तरीय हैं। भाषा सरल एवं स्वाभाविक है। विषयों की सामग्रियों में सच्चाई की झलक चमकती है। यह सच्चाई हृदय को छूती है। विशेषतः श्री पीयूष ओझा के “अलविदा एक्सप्रेस”, श्री उमेश्वर प्रसाद सिंह के “हिन्दी गजल”, श्री नरेन्द्र कुमार सिंह नाहर की कहानी “दुर्भाग्य” आदि।

पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

बेंगलूर,

२-१२-५५

बिनायराडे,

लेखापरीक्षा अधिकारी
(हिन्दी कक्ष-ले० प०-१)

महालेखाकार का कार्यालय (लेखा परीक्षा)

१, कर्नाटका, बेंगलूर



उस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए जो देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती हो, अर्थात् हिन्दी।

— रवीन्द्रनाथ ठाकुर

हिन्दी में राष्ट्रभाषा बनने की पूरी क्षमता है।

— राजा राममोहन राय

माइका ट्रेडिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड
Mica Trading Corporation of India Limited

ए० के० वर्मा

संख्या :—मिटको/पटना/हिन्दी/9/2/90

अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक

दिनांक :—14.9.90

A. K. VERMA

Chairman-Cum-Managing Director

एवं

अध्यक्ष, पटना नगर रा० भा० का० समिति

प्रिय श्री सिंह,

आपको सूचित करते हुए परम हर्ष हो रहा है कि नगर स्तर पर हिन्दी के कामकाज की समीक्षा करने के बाद आपका कार्यालय राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में नगर स्थित मूल्यीय कार्यालयों में सर्वोत्तम पाया गया है। कृपया मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करेंगे।

आपको यह सफलता आपके कुशल नेतृत्व एवं पूरे कार्यालय को एक समूह के रूप में कार्य करने के लिए प्रेरित करने से ही मिली है।

अपने सभी अधीनस्थ अधिकारियों/कर्मचारियों को भी मेरी शुभकामना देने की कृपा करेंगे।

पटना नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की ओर से दिया जाने वाला राजभाषा शिल्ड समिति की ओर से अगले आयोजन में देकर आपको सम्मानित करने की योजना है।

मेरा विश्वास है कि आपका कार्यालय और भी मनोयोग से राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में लगा रहेगा और आप इस प्रकार के अनेक सम्मानों को प्राप्त करने का यश प्राप्त करेंगे।

सादर एवं हिन्दी दिवस की शुभकामनाओं के साथ,

आपका,

(अरुण कुमार वर्मा)

✓ श्री नरेन्द्र सिंह,

महालेखाकार (ले० एवं ह०) II,

बिहार, पटना

Time

Signature of

(6)

सावन - गीत

रामजीजी महेश्वर प्रसाद सिंह

अनुभाग अधिकारी, हिन्दी कक्ष
कार्यालय महालेखाकार (ले० प०) ।
बिहार, पटना ।

मेरा मन मेघा बन, बरस-बरस जाना तुम ।

पूर्वा के संग-संग, बादल को लाना तुम ॥

भीषण उष्णता से, आकुल जन-मन था,
रातें बौरायी थीं, बेचैन दिन था ।

माटी की तपस की, जल से जुड़ाना तुम ।

मेरा मन मेघा बन, बरस-बरस जाना तुम ॥

‘आषाढस्य प्रथम दिवसे’, यक्ष को मन भाये थे,

दूत बन संदेशा तुम, यक्षनी तक लाये थे ।

नागफनी आँचल में, सुमन लेके आना तुम ।

मेरा मन मेघा बन, बरस-बरस जाना तुम ॥

बैठी है कब से प्रिया, सूने दालानों में,

कहीं लौट आये प्रिय, सावनी तूफानों में ।

रिमझिम फुहार लिये, सज्जन आ भी जाना तुम ।

मेरा मन मेघा बन, बरस-बरस जाना तुम ॥

सतरंगी किरणों ने चुनरी रंग डाली है,

इन्द्र धनुष, बिजुड़ी-बाण, घटा काली-काली है ।

दामिनी दमकाके प्रिया, समेत आ डराना तुम ।

मेरा मन मेघा बन, बरस-बरस जाना तुम ॥

लोक लेखा समितियाँ

श्री सतीश चन्द्र सिन्हा,
एम०ए०, बी०एल०,
लेखा अधिकारी

प्रजातांत्रिक राज्य व्यवस्था का मूल सिद्धान्त होता है, कार्यपालिका का विधायिका के प्रति पूर्णतः उत्तरदायी होना। आधिकारिक रूप में इस संदर्भ में ही लोक लेखा समिति का उदय प्रजातंत्र की जननी ब्रिटीश संसद में शताब्दियों पूर्व ग्लाउडस्टोन के समय में हुआ। तब से इसमें उत्तरोत्तर विकास क्रम चलता रहा है।

भारत के प्रजातंत्र में भी संविधान द्वारा विधायिका को सर्वोपरि अधिकार प्राप्त है कि वह जनराजस्व को पूर्णरूपेण नियंत्रित करने के लिए व्यय के प्रकार को इंगित करे तथा कार्यपालिका द्वारा किये गये व्यय को ब्योरेवार जाँचे, परखे। इस आवश्यकता को ध्यान में रखकर संविधान में सुदृढ़ प्रबन्ध किये गये हैं। सर्वप्रथम केन्द्र के लिए तथा राज्यों के लिए अलग-अलग कन्सोलीडेटेड फंड का निर्माण किया गया है जिसमें सरकार के समस्त राजस्व इकट्ठा होते हैं और इसमें से व्यय विधायिका के व्यापक मतदान से ही हो सकता है। इसमें साफ तौर पर दर्शाया जाता है कि व्यय किस मद पर होगा। इसकी लेखा के रखरखाव को विभिन्न मुख्य शीर्षों द्वारा दर्शाया जाना आवश्यक होता है। साथ ही सभी कार्यपालिका अधिकारियों को राजस्व एवं व्यय का समुचित लेखा रखना अनिवार्य है। इसकी वास्तविक जाँच-परख एक स्वतंत्र एवं दक्ष संवैधानिक अधिकारी करते हैं जिन्हें भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक नामित किया गया है। आप संविधान की धारा १५१ के अनुसार केन्द्र का तथा अलग-अलग राज्यों के वार्षिक लेखाओं को क्रमशः राष्ट्रपति एवं राज्यों के राज्यपालों को समर्पित किया करते हैं, जिसे संबंधित महामहिम संसद/विधानसभा के पटल पर प्रेषित कर देते हैं। किन्तु यह कार्य असम्भव तो नहीं अपितु कठिन अवश्य है कि संसद/राज्य विधायिका इस वृहत् एवं तकनीकी लेखा की ब्योरेवार जाँच अपने बड़े आकार तथा समय की कमी के कारण कर सके। इस कार्य की गहनता को ध्यान में रखकर भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक को आधिकारिक रूप में लेखा परीक्षा का कार्य सौंपा गया है। इस कार्य में आपको पूर्ण वर्चस्व प्राप्त है तथा इस कार्य में आप अपने स्वविवेक का प्रयोग करते हैं। सुविधा के लिए ऐसे लेखा-परीक्षा प्रतिवेदनों एवं कार्यपालिका के कार्यों की विवेचना करने का भार विधायिका द्वारा एक समिति को सौंपा गया है जिसे लोक लेखा समिति के नाम से जाना जाता है।

लोक लेखा समिति में पन्द्रह सदस्य होते हैं जिनका चुनाव केन्द्र में संसद तथा राज्यों में वहाँ की विधायिका के सदस्यों द्वारा एक वर्ष की अवधि के लिए आनुपातिक चयन पद्धति से एकल हस्तान्तरण मतदान द्वारा किया जाता है। संसद/विधायिका के सदस्यों द्वारा किन्तु कार्य अवधि मतदान द्वारा बढ़ाई

जा सकती है। वर्ष १९५४-५५ से ही केन्द्र में राज्यसभा के सात सदस्य ऐसी समिति में सम्मिलित किये जाते हैं। मंत्री मण्डल समिति के सदस्य नहीं चुने जाते हैं और चुने गये सदस्यों में से भी बाद में मंत्री बनने पर वैसे सदस्य स्वतः समिति के सदस्य नहीं रहते हैं। समिति के चेयरमैन संसद/सदन के अध्यक्ष द्वारा चयनित सदस्यों में से ही चुने जाते हैं जिनका भी कार्यकाल एक वर्ष का ही होता है। वर्ष १९६७ में प्रथम बार केन्द्र में इस समिति के चेयरमैन बिरोधीदल से चुने गये थे तबसे वह क्रम संवैधानिक प्रचलन के रूप में चलाया जा रहा है।

समिति का प्रमुख कार्य क्षेत्र इस बात की सूक्ष्म एवं वृहत् जांच से है कि संसद/सदन के द्वारा मतदान से पारित राशि उसी कार्य पर व्यय की गई जिसके लिए मतदान से निर्धारित की गई थी, अर्थात् क्या व्यय मांग क्षेत्र के अनुरूप ही किया गया या कार्यपालिका द्वारा वैसे मांग क्षेत्र की राशि जहां बचत हुई उसे ही दूसरे अधिक मांग क्षेत्र के लिए व्यवहृत किया गया। इसकी सूक्ष्म विवेचना के लिए तथा भारत के गणतंत्रात्मक प्रजातंत्र स्वरूप के कारण नियंत्रक-महालेखापरीक्षक केन्द्र के लेखा को तथा राज्यों की लेखाओं की भी लेखा परीक्षा करते हैं। यह व्यवहार अनेक राष्ट्रों में प्रचलित वित्त प्रशासनों से एक मायने में भिन्न है, क्योंकि बहुत से देशों में केन्द्र तथा उसके घटक राज्यों में इस कार्य के लिए अलग अलग पदाधिकारी होते हैं। शायद यही कारण है कि अपने देश में गणतंत्रात्मक स्वरूप होने के बाद भी लेखा प्रणाली तथा लेखापरीक्षा में समरूपता है। इस कार्य की महत्ता इसलिए और बढ़ती है कि संसद/सदन अपने स्तर पर भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक के द्वारा समर्पित लेखा परीक्षा प्रतिवेदनों को जांचती है और इस महत्वपूर्ण कार्य को सम्पन्न करती है लोक लेखा समितियाँ जो केन्द्र तथा राज्यों के स्तर पर अपना अलग-अलग अस्तित्व बनायी हुई हैं।

इस संदर्भ में यह कहना सर्वथा उचित है कि लोक लेखा समिति एक ऐसा सुदृढ़ मंच है जहाँ भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा समर्पित लेखा परीक्षा प्रतिवेदनों के आधार पर विभागों के वित्त कार्य-कलापों की खुलकर जांच परख की जाती है। समिति एक सुसंहत संस्था है और इसकी जांच गैर दलीय स्तर पर की जाती है। दूसरे शब्दों में, समिति अपने विचार विमर्श में दलगत अस्तित्व को गौण रखती है। समिति का मुख्य उद्देश्य यह परखना है कि कार्यपालिका ने विधायिका द्वारा पारित व्यय मुद्दों को ठीक उसकी इच्छा के अनुरूप ठीक उसी कार्य पर ही कार्यान्वित किया है जिसे विधायिका चाहती थी।

समिति के सभी प्रतिवेदन चाहे केन्द्र में के हों या राज्यों में के हों एक मत रूप में ही हुए हैं। यह प्रमाण है कि समिति नेक भावना एवं तत्परता से कार्यरत है। समिति की जांच लेखा की अनौपचारिकता को पार कर उस बिन्दु तक पहुँचती है जहाँ प्रत्येक व्यय की व्यावहारिकता, विश्वसनीयता, चतुरता एवं मितव्ययिता पर प्रकाश डाला जाता है। परन्तु समिति न केवल लेखा-परीक्षा प्रतिवेदनों की समीक्षा तक ही अपना कार्य क्षेत्र सीमित रखती है वरन् उसे अधिकार है कि वह जनवित्त से सम्बन्धित किसी भी पक्ष पर अपना विचार प्रकट करे। अतः समिति वित्त प्रशासन पर अपने विचारों को संकेन्द्रित करती है यद्यपि कि यह क्षेत्र पूर्णतः कार्यपालिका का है। प्रशासन में हस्तक्षेप न करने के अपवाद में समिति ने निश्चित रूप से प्रशासन की खामियों को समय-समय पर उजागर किया है। ऐसे प्रकरणों पर विभाग को यह पुष्टि करनी होती है कि द्रष्टव्य उदाहरणों की पुनरावृत्ति नहीं होगी।

भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक का सहयोग समिति के कार्यकलापों में अति महत्वपूर्ण होता है किन्तु उनके लिए केन्द्र में तथा राज्यों के ऐसी सभी समितियों में भाग लेना सम्भव नहीं होता है। इस कारण राज्यों में वहाँ के महालेखाकार उनका प्रतिनिधित्व करते हैं। मूल मुद्दे जिस पर साक्ष्यों की जाँच करनी होती है वह पूर्व में ही लेखा परीक्षा प्रतिवेदनों में तैयार मिलती है जिससे समिति को सुविधा होती है। भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक/राज्यों के महालेखाकार एक अर्थ में समिति के साथ सखा, द्रष्टा एवं मार्गदर्शक की भूमिका निभाते हैं। परन्तु इनसे कभी भी साक्षी के सदृश्य समिति द्वारा नहीं बर्ताव किया जाता है। विचाराधीन मुद्दों पर विभाग के साक्षी से प्रश्नोत्तर के समय भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक हर प्रकार से समिति को एक सुदृढ़ निष्कर्ष निकालने में सभी तथ्यों तथा आवश्यक आंकड़ों से सर्वांगीण सहायता करते हैं। मध्यवर्ती के रूप में यदाकदा महालेखापरीक्षक विभागों द्वारा समर्पित टिप्पणियों एवं जापाकों की शुद्धता एवं सार्थकता की जाँच परख भी कर लेते हैं। समिति के प्रतिवेदन प्रारूप में भी तथ्यों तथा आंकड़ों की परख कर सहायता करते हैं।

साधारण तौर पर समिति मात्र कार्यालयीय साक्षियों की ही जाँच करती है और इसके लिए किसी कार्यालय के अभिलेखों को सुविधानुसार मांग सकती है। व्यय एवं राजस्व से सम्बन्धित किसी लेखा एवं साक्षी परीक्षण के क्रम में सूक्ष्म विचारोपरान्त समिति किसी मद को नकारती नहीं है या ऐसी नकारात्मक आज्ञा नहीं देती है। फिर भी किसी भी वित्त अनियमितताओं या खामियों पर समिति अपना विचार देती है तथा अपना मत अनुशंसित करती है। विभाग भी बहुत सावधानी से प्रतिवेदनों पर अमल करते हैं। अगर विभाग कभी आवश्यक समझता है तो अपने तथ्यों को समिति द्वारा पुनर्विचार के लिए समर्पित करता है। अगर समिति अपने प्रतिवेदन में परिवर्तन नहीं करती है तो विभाग तदनुसार ही कार्य करते हैं। ऐसी स्थिति में अगर गतिरोध उत्पन्न हो जाय तो संसद/सदन इसे सुलझा लेते हैं किन्तु, व्यापक कारणों से ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होती।

समिति का कार्यकलाप कदापि यह नहीं है कि किस अमुक भूल सुधार के लिए किसको क्या दण्ड दिया जाय या वह दण्ड पर्याप्त है या अपर्याप्त। यह निःसन्देह कार्यपालिका का कार्य-क्षेत्र है, समिति का नहीं वरन् कि कोई विषय-वस्तु न्याय के आड़े न आती हो। इसके साथ ही समिति यह भावना भी नहीं पनपने देती है कि वह एक जाँच-पड़ताल स्थल है, क्योंकि ऐसा अगर हुआ तो साक्षी स्वच्छ हृदय से उन विचाराधीन विन्दु से कतरायेगे और सरकार के कार्यों की पूर्ण निष्पक्ष परख नहीं हो पाएगी। अतः समिति एक व्यक्ति को जिम्मेवार नहीं ठहराती है।

आवश्यकता पड़ने पर संसद के अध्यक्ष की अनुमति से समिति उस स्थल का भी निरीक्षण करती है जहाँ वास्तविक कार्य किया गया होता है। ऐसा निरीक्षण समस्त समिति द्वारा, उनके उपसमिति द्वारा या कार्यकारी खण्डों में से किसी के द्वारा किया जाता है, किन्तु एक सदस्य द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर नहीं किया जाता है।

विभागीय साक्षियों द्वारा लिखित या मौखिक वयानों को ध्यान में रखकर समिति के जाँच प्रतिवेदन का प्रारूप समिति सचिवालय बनाता है। ऐसा प्रारूप प्रतिवेदन फिर समिति के चेयरमैन की स्वीकृति के

लिए प्रेषित किया जाता है जिसकी एक प्रति भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक की तथ्यों के मिलान के लिए भेजी जाती है। जब समिति ऐसे प्रतिवेदन को स्वीकृत करने के लिए बैठक करती है तो नियंत्रक महालेखापरीक्षक तथ्यों में हुए परिवर्तनों पर प्रकाश डालने के लिए बैठक में उपस्थित रहते हैं। समिति द्वारा अंतिम रूप से स्वीकृत प्रतिवेदन उसके चेयरमैन या उनकी अनुपस्थिति में किसी एक सदस्य द्वारा लोकसभा को समर्पित किया जाता है। प्रतिवेदन की एक प्रति राज्यसभा के पटल पर भी कोई सदस्य जो राज्यसभा के सांसद होते हैं, रखते हैं।

वर्तमान में राष्ट्र का बहुत बड़ा क्षेत्र व्यापारिक उद्यमों में लगा है जिसका कार्य निगमों तथा सरकारी उपक्रमों द्वारा होता है, जिसमें जन राजस्व की बहुत बड़ी राशि लगी है। इसे भी विधायिका को जांचना होता है कि ऐसे व्यय ठीक उन्हीं कार्यों पर लगाये गये हैं जिनके लिए लक्ष्य निर्धारित था। इसके लिए भी भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक निगमों के व्यावसायिक अंकेक्षणों के बाद भी ऐसे निगमों एवं सरकारी उपक्रमों का (कुछ कानूनी निगमों को छोड़कर) अध्यारोहित लेखापरीक्षा करते हैं। इस क्षेत्र में महालेखापरीक्षक द्वारा की गई लेखा परीक्षा दक्षता सह योग्यता निष्पादन की होती है जो विधायिका को समर्पित की जाती है। इसकी परख के लिए एक भिन्न समिति गठित की गई है जिसे जन उपक्रम समिति के नाम से जाना जाता है। यह समिति महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन की समीक्षा करती है। इस समिति को कुछ स्वतंत्र जांच भी करनी पड़ती है जिसके फलस्वरूप इस समिति की जांच परिधि में आकलन समिति तथा लोक लेखा समिति दोनों के कार्यों का समन्वय-सा हो जाता है। जिस राज्य में ऐसी समिति गठित नहीं की गई है वहाँ महालेखापरीक्षक के ऐसे प्रतिवेदनों को लोक लेखा समिति ही परखती है।

लोक लेखा समिति की कार्य प्रणाली में कुछ बड़े रोचक मुद्दे सामने आते हैं। समिति अपने कार्य को ज्यादा सफल बनाने के लिए उपसमितियों का गठन करती है जिसे अलग-अलग विभागों के गहन वित्त सम्बन्धी कार्यों का परीक्षण सौंपा जाता है। इससे उप समिति के सदस्य साक्षी से ज्यादा सूक्ष्म प्रश्न करते हैं क्योंकि वैसे सदस्य को इसका पूर्व ज्ञान हो जाता है।

साक्षी के रूप में विभाग के सचिव का उपस्थित होना ज्यादा महत्व रखता है, क्योंकि सचिव सीधे कार्य सम्पादन नहीं करते हैं। इस कारण वे ज्यादा साफ राफ होकर गहन विन्दुओं पर प्रकाश डालते हैं जो समिति के कार्यकलाप का चरम बिन्दु है। अतः समिति की धारणा है कि सचिव का प्रवक्ता होना सभी पहलुओं से श्रेयस्कर है।

अंततः समिति सरकार के सम्पूर्ण ढाँचे को ध्यान में रखकर यह जानना चाहती है कि समस्त कार्यप्रणाली में क्या कोई त्रुटिपूर्ण खोंट तो नहीं है जिसकी पुनरावृत्ति समाप्त की जा सके क्योंकि सरकार एक शाश्वत सत्य है। अतः इस महानतम अजस्र विभूति के व्यवस्था-चक्र में कोई त्रुटि न रहे और मानवैत कारणों से अगर त्रुटि पाई गई, तो उसका परिमार्जन अविलम्ब कर दिया जाय, वह पनपे नहीं या उसका पुनरावृत्ति कदापि न हो, इसी पावन उद्देश्य को लेकर कार्यरत है "लोक लेखा समिति।"

आत्मबोध

श्री इयाम किशोर सिंह

वरिष्ठ लेखा परीक्षक

हिन्दी कक्ष, कार्यालय

महालेखाकार (ले० प०), I बिहार, पटना।

समय के अनुसार मुझे बदलना पड़ता है

न चाहने पर भी वही कुछ करना पड़ता है

जो अन्तर्मन में रेंगता रहता है बार-बार,

हालांकि, मैंने ठुकराया है उसे कइयों बार।

किन्तु, एक बार कर गुजरने के बाद का

थोड़ी देर का पश्चाताप

शनैः शनैः विलीन हो जाता है

उस अन्तहीन शून्याकाश में

जहाँ भोग-लोभ को गंगोत्री से

निकलती है जीवन-कर्म की गंगा

और प्रेरणा के मृत्युभोज पर

अर्पित किया जाता है

“मरण-पिण्ड” सर्वश्रासी जीवन को

और “उच्छिष्ट भक्ष्य”

भटकती हुई अतृप्त इच्छाओं को।

मैं बैठ जाता हूँ होने और न होने की स्थिति में

और मेरा अस्तित्व मुझे ही नकार देता है

यही होती है मेरी नियति।

कभी-कभी लोभ जब आँसू बत जाते हैं
तो उसकी तिक्तता को पीना पड़ता है
भविष्य की सुखद कल्पना में
सौ बार मरकर भी जीना पड़ता है
एक लसलसाती हुई लालच की झाग
गले में अटक जाती है
न भीतर आती है, न बाहर जाती है
फिर भी पैर उस अनचाही राह पर बढ़ जाता है
जहाँ न दिन का उजाला होता है
और न रात की अँधियाली
सिर्फ असम्पृक्त अस्तित्वहीन अहम्
और मरे हुए शरीर की गंध ।

++++

40165
6886
57051
5000
42051

हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने हेतु अनेक अनुष्ठान
हुए, उनको मैं राजसूय यज्ञ समझता हूँ ।

—आचार्य क्षितिज मोहन सेन

हिन्दी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का श्रोत है ।

—सुमित्रानन्दन पन्त

आत्मा से परमात्मा की ओर

श्री चन्द्रिका सिंह, लेखाकार,
निधि मेड—॥ शाखा, महालेखाकार
बिहार, पटना ।

छोड़ सखी अब जाने दे री
पिया मिलन की घड़ियाँ री
लाख रोक तु राहें मेरी
रुक न सकेगी चिड़ियाँ री
छोड़ सखी

जिस प्रियतम के लिए विकल थी
उन्मन थी हर पल चंचल थी
आज इसी प्रीतम ने छेड़ी
अपनी मधुर बंसरिया री
छोड़ सखी

अब कैसे मैं रुक सकूँ यहाँ पर
चली सखी मैं आज पिया घर
तुम सब भी खुश रहो सखी री
ओढ़े लाल चुनरिया री
छोड़ सखी

आयेगी तेरी भी बारी
जायेगी पी-घर-मतवारी
आयेंगे पी ले जायेंगे
थामें तेरी अँगुरिया री
छोड़ सखी

राजा साहब एवं उनकी सूक्तियाँ

डॉ० जितेन्द्र कुमार,
एम. ए. (द्वय), पी.-एच.डी.,
अनुभाग अधिकारी, "हिन्दी कक्ष"
महालेखाकार (ले. एवं ह.) I,
बिहार, पटना का कार्यालय

स्वर्गीय राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह का जन्म ग्राम-सूर्यपुरा, जिला-शाहाबाद (बिहार) में १०-९-१८९० को और देहावसान २४-३-१९७१ को हुआ। उनके प्राणान्त के बाद भी ऐसा प्रतीत होता है कि आज भी वे हमारे सम्मुख खड़े हैं। उन्हें सभी "राजा साहब" कहते थे।

यों तो यह दुनिया एक सराय है जहाँ हर कोई आता ही है इसलिए कि उसे कहीं न कहीं जाना होता है, किन्तु इस आने और जाने के क्रम में हर की गति की अपनी-अपनी विशेषता होती है। कोई ऐसे आता है कि आके भी दिल में आ नहीं पाता और कोई ऐसे जाता है कि जा के भी दिल से जा नहीं पाता। राजा साहब हमारे बीच से जाकर भी हमारे दिल से जा नहीं पाए। "राजा साहब का देहान्त तो हो गया, किन्तु उनकी याद आज भी हरी है। गुलाब की पंखुड़ियाँ तो बिखर गईं, किन्तु उनकी खुशबू आज भी बर्करार है" ("Raja ji is dead but his memory lives. Petals of the rose have fallen but its fragrance still remains.") "वीणा बज चुकी पर उसकी गूंज रह गई।" शायर इकबाल ने ठीक ही कहा है :—

"हजारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पर रोती है। बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदवर पैदा।" राजा साहब मरकर भी अमर हैं। किसी शास्त्रकार ने ऐसे व्यक्तियों के विषय में ठीक ही कहा है — "कीर्तिर्यस्य स जीवति।" २४-३-१९७१ को वे अपने श्रद्धालुओं एवं प्यारों को विलखते छोड़ गए, किन्तु उनका अगाध एवं अक्षय साहित्य उन्हें सदा अमर रखेगा। उनका साहित्य जीवन का मधुमास लुटाता रहेगा।

राजा साहब के दिल में सरलता, सरसता एवं सहृदयता की त्रिवेणी अनवरत प्रवाहित होती थी। उनमें बच्चों की-सी सरलता थी। वे मृदुभाषी थे। विनम्रता तो उनके अन्दर कूट-कूट कर भरी थी। वे "सत्यम् शिवम् सुन्दरम्" के प्रतीक थे। राजा साहब राजा होते हुए भी साधारण इंसान की तरह रहते थे। उनमें लेश मात्र भी अहंकार नहीं था। वे बड़े दयालु एवं निष्कपट व्यक्ति थे। वे निर्धन छात्रों को आर्थिक सहायता दिया करते थे। उन्हें "राजा" शब्द से नफरत थी। उन्होंने कहा, "अब कहां है राजा राधिक

रमण प्रसाद सिंह ? उसकी राजाई तो १९४७ ई० में ही उतर गई । कुदरत की झोली में न कोई राजा है, न रंक । अब तो सब बराबर हैं जैसे ।”

उनकी जिन्दादिली, चुहलकदमी भुलाए नहीं भुलाई जा सकती । वे जिस महफिल में जाते एक समां-सी बंध जाती । उनके भाषण में शेरों-शायरी का इतना बाहुल्य रहता कि श्रोतागण कभी उबते न थे अपितु मदमस्त होकर झूमते थे और शेरों-शायरी को सुनकर “Once more, once more” की रट लगाते थे । एक महाविद्यालय के वाषिकोत्सव में राजा साहब सभापति थे और एक भद्र महिला प्रधान अतिथि थी । वाषिकोत्सव समाप्त होने के पूर्व ही जब वे (भद्र महिला) उठकर चलने लगीं तब राजा साहब ने किफ माइक उठाया और दो-तीन शेर सुनाने के पश्चात् कहा :—

“नजरो से बचकर चले जाइएगा,

पर दिल से निकलकर कहां जाइएगा ।”

राजा साहब की भाषा कभी बूढ़ी नहीं हुई अपितु सदा जवान रही । उनकी भाषा मानों एक युवति है जो हिन्दी की बिन्दी लगाती है, संस्कृत की सिन्दूर लगाती है और उर्दू का सुरमा लगाती है । जगदीश शुक्ल जी ने “हमारे राजा साहब” निबन्ध में लिखा है, “राजा साहब की समन्वय-शैली कभी हिन्दी की चोली और चुन्दरी में चमक उठती है, कभी उर्दू की शलवार और ओढ़नी में निखर पड़ती है । कभी संस्कृत के चन्द्राकान्त और कौस्तुभ से समलंकृत होती है, कभी फारस के याकूत और जमुरंद से संवर जाती है ।”

उनकी भाषा गंगा-जमुनी भाषा के नाम से प्रसिद्ध है । वे हिन्दी, उर्दू-फारसी, बंगला और अंग्रेजी के विद्वान थे । वे हिन्दी गद्य, नाटक, निबन्ध एवं उपन्यास के उच्च कोटि के रचयिता थे अर्थात् उन्हें हम एक साथ ही निबन्धकार, नाटककार, उपन्यासकार कह सकते हैं । “हिन्दी भारती” को उनका दान अत्यन्त सराहनीय है । भारत सरकार ने उन्हें “पद्मभूषण” की उपाधि से विभूषित कर अपनी मान्यता की मुहर लगाई थी ।

आज कविता के रूप में गद्य लिखने वाले अनेकानेक हैं, किन्तु गद्य के रूप में कविता लिखने वाले मात्र राजा साहब ही थे । उनकी सारी रचनाएँ बेजोड़ हैं । चाहे वे “राम रहीम” हों अथवा “नारी क्या एक पहेली ?” एक बार एक सज्जन ने पूछा कि आपकी कौन-सी रचना सर्वोत्तम है ? उन्होंने कहा, “बाप के लिए तो सभी बेटे का स्थान एक समान है, उसी प्रकार साहित्यकार के लिए उसकी समस्त रचनाओं का महत्व है । “राम रहीम” को तो अपनी जगह पर स्थान है ही, फिर भी “चुम्बन और चांटा” मेरी सबसे छोटी संतान है, इसलिए उस पर मेरी ममता ज्यादा है ।” उनकी अनेक रचनाओं में “राम रहीम”, “पुरुष और नारी”, “पूरब और पच्छिम”, “टूटा तारा”, “तब और अब”, “गांधी टोपी”, “सूरदास” “नारी क्या एक पहेली ?” “चुम्बन और चांटा” अत्यधिक प्रशंसनीय हैं ।

लक्ष्मी एवं सरस्वती में साधारणतया बँर रहता है, किन्तु राजा साहब लक्ष्मीपति होते हुए भी सरस्वती के अनन्य उपासक थे । साहित्य-साधना उनके जीवन का लक्ष्य था । उन्होंने अनेक बार यह कहा है—

“अपना तो यही काया, अपना तो यही हज है,
अपना तो यही काशी, अपना तो यही व्रज है।”

“पीता हूँ वह मय नशा उतरता नहीं जिसका,
खाली नहीं होता है पैमाना मेरे दिल का।”

राजा साहब सूक्तियों के सम्राट् थे। उनकी लेखनी से निकली सूक्तियों के कुछ नमूने पेज किए जाते हैं :—

“उषा की लाली तो अपने दामन में उजेला लिए आती है, मगर

गोधूली की लाली छोड़ जाती है सर पर धूप अंधेरा।”

“जिस सर पर सेहरा बंधता है, उसी पर एक दिन कफन भी बंधता है। यही दुनिया है। एक हथेली पर गम और मातम है, दूसरी पर राग-रंग। सुख-दुख तो एक ही सिक्के के दो रूप हैं। धूप-छाँह की आँख मिचौती ही जिन्दगी ठहरी। बारात-पार्टी और अर्थी तो एक ही तने की दो टहनियाँ हैं जैसे। यही दुरंगा तमाशा तो दुनिया है। कहीं हाय-हाय ! कहीं वाह-वाह ! जहाँ उजेला है, वहीं अंधेरा भी है।

“हर रोज बारातें आती हैं,

हर रोजे जनाजे उठते हैं।

हर होठ पर कलियाँ खिलती हैं,

हर आँख से आंसू झरते हैं।”

“आँचल के कोर की प्रत्यंचा से छूटा हुआ तीर कलेजे को चलनी कर डालता है।”

“माँ के दुलार में मधु की मिठास है, बाप के प्यार में कुनैन की कड़ुवाहट। पत्नी के प्रेम में बोतल के नशे का सहर है, भाई के स्नेह में शासन का गरूर। मगर बहन का स्नेह ? वह तो अमृत का मेह है।”

“मन-मदारी के डमरु पर ही इस शरीर का सारा तान-तेवर है।”

“सर झुकने से नीचा नहीं होता, ऊँचा ही उठता है।”

“अपने प्रति न्याय करो, दूसरों के प्रति क्षमा-यही मनुष्य की पहचान है।”

“कितना कुछ है जो अनचाहे भी हो जाता है और कितना कुछ है जो चाहकर भी नहीं होता।”

“कवि की अनुभूति बोलती है, उसकी वाणी तो उस गूँज की प्रतिध्वनि है।”

“कामयाबी तो हिम्मत के हरम की बांदी ठहरी।”

“तुम नहीं मरते, मरती तो है यह देह, बस। मृत्यु तो अपनी मुक्ति है—मुक्ति निधन होने से कोई निधन नहीं होता—उसकी सारी कमाई साथ ही जाती है।”

“किसी की हवस भी बूढ़ी होती है? छाती के रोएँ सफेद होते हैं, पर छाती का लहू लाल ही रहता है।”

“वही संगीत-नृत्य, वह छुमछुनन् का नाज-अंदाज जो कल तक मीना बाजार के दुतल्ले पर ही कुलांच ले पाता, आज कल्चर और कला की कुलीनता लिए बाजारी तवायकों के कोठे से उतर आया शरीफ की कोठी में।”

“त्याग का सुहाग ही न रहा तो फिर अनुराग क्या?”

“बोतलों का काग ही न खुले तो फिर फाग का सुहाग क्या?”

“प्यार में देना ही देना है—अपने लिए कुछ लेना नहीं। जल-जल कर मरना ही उस प्यार का निखार है। अपने काम की आहुति ही न हुई तो फिर वह प्रेम-यज्ञ क्या?”

“कौन ऐसा मनस्वी है जो चाँदी की चिकनाहट पर फिसल न पड़ा, किन्तु चाँदी की चिकनाहट से भी कहीं कातिल, कहीं संगीन एक चटकीले चेहरे की चिकनाहट है जिस पर बड़े-बड़े चरित्र वालों की चितवन, उनकी चेतना की सारी चौकसी भी फिसल जाती है पल में। जभी तो शास्त्रों में आया है—कामिनी-कञ्चन-कामिनी पहले, कञ्चन पीछे।”

“जब मन ही रम गया भजन में, तो फिर कामना की कमान ताने कौन? रह गए सारे तीर तूणीर में।”

“तरुणी के रूप-रंग की विल्लौरी चिकनाई पर मन का फिसलना एक साधारण बात है। फर्क यही है कि जवान फिसल कर गिरता भी है तो दामन झाड़कर खड़ा हो जाता है और अधेड़ गिरता है तो कमर टूट जाती है।”

“जो हाथ चोलियों का बन्द टटोलता रहा, वह तलवार की मूठ पर क्या जौहर दिखलाएगा?”

“इधर आदमी की तरक्की है, उधर आदमीयत की तबाही। इधर दिमाग का बोलबाला है, उधर दिल का दिवाला है। इधर लिफाफे की रंगीनी बढ़ रही है, उधर खत का मजमून बिगड़ रहा है। राजनीति हँस रही है, नीति रो रही है। बल ताल ठोंकता है, शील कपाल ठोंकता है।”

“नारी में तो मातदिली है नहीं। वह आग है या बर्फ। शोला है या शबनम। पीयूष है या विष। राग है तो फिर जान दे देगी, विराग है तो फिर जान ले लेगी।”

“नारी का हृदय जब पिघलता है तब नवनीत को भी नरमी में मात करता है, लेकिन जब ठिठुरता है, तब बर्फ की चट्टानों से भी कठोर हो जाता है।”

“फूल तो मुस्कुराता नहीं, मुस्कुराता है दिल, चाँदनी तो हँसती नहीं, हँसता है जी। जब यह दिल लहरा है तो विश्व के जर्ने-जर्ने पर यौवन की लहर है।”

राजा साहब की रचनाओं एवं कृतियों में शेरों-शायरी के उदाहरण की झड़ी लगी हुई है जिन्हें उद्धृत का लोभ-संवरण नहीं किया जा सकता । कुछ नमूने पेश किए जा रहे हैं :—

“याद में तेरी जहां को भूलता जाता हूँ मैं,
भूलनेवाली ! कभी तुमको भी याद आता हूँ मैं ?”

“सपनों में ही आ जाती, तुम्हारा कुछ नहीं जाता,
तुम्हारी लाज रह जाती, मुझे दीदार मिल पाता ।”

“वह गुल है गुल नहीं, जिस गुल में बू न हो,
वह दिल है दिल नहीं, जिस दिल में तू न हो ।”

“मुद्दत के बाद आज मेरे घर वो आए हैं ।
यह ऐसी रात हो, कभी जिसकी सुबह न हो ॥”

“वह सर नहीं कि जिसमें न सौदा हो इश्क का ।
वह दिल नहीं कि जिसमें हसीनों का घर न हो ॥”

“तुम घड़ी भर ख्वाब में ही झिलमिला जाती तो क्या जाता ?
दो चुल्लू अपनी नजरोں से पिला जाती तो क्या जाता ?”

“छिपा है चाँद जब देखो दुपट्टा है घटा घनघोर,
तुम घूँघट ओट से ही मुस्कुरा जाती तो क्या जाता ?”

“मर्दों के लिए हर जुल्म रवा, औरत के लिए रोना भी खता
मर्दों के लिए लाखों सेजें, औरत के लिए बस एक चिता
मर्दों के लिए हर ऐश का हक, औरत के लिए जीना भी सजा ।”

“मेरा दर्देदिल कोई क्या जानता है,
जो गुजरा है दिल पर खुदा जानता है ।

लगी इश्क की चोट हो जिसके दिल पर
वही दर्देदिल का पता जानता है ।

लगी हो लगन जिसके दिल में दिलों की,
वही दर्देदिल का मजा जानता है ।

जो हर दिल को अपना ही दिल मान बैठे,
वही दर्देदिल की दवा जानता है ॥”

“सुख की चाट लगी मुँद गई आँख
दुख का चाँटा लगा खुल गई आँख ।”

“दिल के आइने में है तस्वीरे यार,
जब जरा गर्दन झुकाई देख ली ।”

अस्तु, उनकी शेरों-शायरी एवं सूक्तियों के उदाहरणों को कहां तक बढ़ाया जाय ? डंके की चोट पर यह कहा जा सकता है कि सूक्तियों की दृष्टि से राजा साहब हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ लेखक थे । शेरों-शायरी की कला में भी वे अद्वितीय थे । वे दरअसल सूर्यपुरा के राजा ही नहीं अपितु जनता-जनार्दन एवं साहित्यिकों के दिल के राजा थे । श्री अजित नारायण सिंह “तोमर” ने ठीक ही कहा है— “राजा साहब राजाओं में सन्त, मानवीय गुणों के महन्त, शैली के सम्राट, भाषा-शिल्प के सफल साधक और माँ भारती के एक निष्ठ आराधक थे ।”

अन्त में किन्हीं के शब्दों को दुहराते हुए उनके विषय में शोक-विह्वल होकर कहना चाहता हूँ :—

“बड़े शोक से सुन रहा था जमाना,

तुम्हीं सो गए दास्तां कहते-कहते ।”

इत्यलम् ।

देश के सबसे बड़े भू-भाग में बोली जाने वाली हिन्दी
ही राष्ट्रभाषा की अधिकारिणी है ।
—सुभाष चन्द्र बोस

यदि हम भारत की राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं तो
हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है ।
—महात्मा गांधी

गजल

शब्बीर हसन "शब्बीर"

मेरे इश्क की यह भी सोगात होगी
जवाँ रात होगी जो अब बात होगी

खुशी है, इसी में तो खामोश हूँ मैं
न आहें भरूँगा न यह बात होगी,
खड़ा हूँ मैं तन्हा तेरी रहगुजर पर
कि अब जिन्दगी से मुलाकात होगी,
ख़यालों के बादल ने घेरा है आकर
उमड़ कर अब आँखों से बरसात होगी,

जमीं अपने महबूर पे जो घूमती है
तो दिन ढर रहा है कि फिर रात होगी,

तेरे हुस्न की भी कहानी अजब है
कि उनवान उसकी मेरी जात होगी ।

जाबिया (दृष्टिकोण)

शब्बीर हसन "शब्बीर"

मैंने देखा करीब से इसको
यह किसी महजबी की सूरत है
इसकी धड़कन में नगमगी सी है
इसकी आहों में एक शरारा है

यह तो चंचल भी शोख भी है बहुत
इसके होठों में मुस्कुराहट है
इसके दामन में फूल की खुशबू
हर कदम ताजगी की आहट है

इसके वरअक्स जब हया देखी
एक दुल्हन है जो मोम की मानिन्द
यह पिघलती है शर्म से कितनी
इसके छूने से मेरे दिल में भी
एक अहसास जाग जाता है

यह मुसर्त की झील में रहकर
महो अंजुम के गिर्द रहती है
अपने अहसास की तपिश से यह
यों लहू दिल का शर्म करती है

मैंने देखा है इस तरह भी इसे
सारी खशियाँ हुई कभी काफूर
गम के बादल हैं सर पे मंडलाते
किस कदर है बदन थकन से चूर

दिन गुजरता नहीं है जल्दी से
एक पल एक साल लगता है
इसके होठों पे सदर्मेहरी है
इसका चेहरा बुझा बुझा सा है

है खुशी और गम की यह संगम
इसकी झोली में दोनों रहते हैं
सुबह से शाम तक है गरदिश में
बारी-बारी से आते रहते हैं

मैंने देखा करीब से इसको
अपना अपना ये जाबिया कहिये
इसके दामन में राज पिन्हां है
इसको जीने का सिलसिला कहिये

मैंने पूछा कि नाम क्या है तेरा
शर्म से वह सिमट गई ऐसी
जैसे बादल में चाँद छुप जाय
बोली आहिस्ता जिन्दगी हूँ मैं

विश्व को भारतीय संस्कृति की देन

श्री राजेन्द्र प्रसाद शास्त्री,

लेखा अधिकारी

प्राचीन या अर्वाचीन काल यह बताता है कि भारत कभी ऐसा महाद्वीप नहीं रहा जहाँ विचार और सिद्धान्त गतिशून्य हो गए हों। यहाँ तक कि सभ्यता के विकास की यही स्थिति रही। प्राचीन समय से लेकर अब तक न जाने कितनी तरह के विचार, सिद्धान्त प्रवाह विभिन्न देशों से आए। यह इस देश के उदात्त चिन्तन की विशेषता है कि इन सारे प्रवाहों को सहज स्वीकार कर लिया गया है, वे यहाँ की धरती के साथ आत्मसात् हो गये और इस देश के अंग बन गये। विचारों को लेने के लिये इस देश ने सीमाओं को खुला रखा। वैदिक काल के आदेश “सभी दिशाओं से पवित्र विचार भीतर आने दो”—का आज भी पालन हो रहा है। समाचार-संवादों के आदान-प्रदान या विचार-अभिव्यक्ति पर कोई रुकावट या प्रतिरोध आज भी नहीं है। यह इस बात का प्रमाण है कि भारतीय संस्कृति सृजनात्मकता को कितने खुले ढंग से स्वीकार करती है। हम चाहते हैं कि ज्ञान की खिड़कियाँ सदैव खुली रहे। विभिन्न सभ्यतायें भारत की भूमि में फले-फूले। हम उन प्रवाहों के झोंकों में निर्मूल न हों वरन् वे उर्वरक का काम करें।

भारत अंगुलियों पर गिने जाने वाले उन देशों में है जिनके सिद्धान्तों से अनेक देश प्रभावित हुए हैं। भारत का यह प्रभाव केवल पड़ोसी देशों तक ही सीमित नहीं रहा वरन् चीन, जापान सहित दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के धार्मिक विचार रहन-सहन और चिन्तन शक्ति को प्रभावित किया। हाल के वर्षों में पश्चिम जगत में भी भारतीय दर्शन और विचारों का प्रभाव फैलता जा रहा है। यहाँ तक कि पिछले दो दशकों में भारतीय वस्तुओं के प्रति रुझान और रुचि जागृत हुई है और यह रुचि केवल पूर्वी दर्शन और सभ्यता में रुचि रखने वाले चुनिन्दा व्यक्तियों तक सीमित न रहकर जन समूह को विशेषतया युवा-पीढ़ी को प्रभावित किया है।

भारतीय सभ्यता बहु आयामी है और बहुत पुरानी भी। अतः उसने विश्व को अनेक तरह से प्रभावित किया है। सृष्टिकर्ता के चिन्तन और अध्यात्मज्ञान के मंथन में भारत सदैव अग्रणी रहा है। गणितशास्त्र में शून्य (जीरो) का उद्भव भारत में ही हुआ है जिसके बिना विज्ञान विकसित होकर अन्तरिक्ष की ऊँचाई पर नहीं पहुँच पाता। औषधि के क्षेत्र में आयुर्वेद सबसे प्राचीन विद्या है और औषध-विज्ञान के क्षेत्र में सर्वोत्तम पद्धति है। वास्तुकला में एलोरा की प्रस्तर-गुफायें और दक्षिण के मन्दिर की जोड़ी नहीं। असाधारण कला-कौशल का प्रतीक ताजमहल विश्व में अद्वितीय है। संगीत चाहे कर्नाटक पद्धति का हो अथवा हिन्दुस्तानी-दोनों ने ही पश्चिम जगत पर काफी प्रभाव डाला है। मनोविज्ञान में योग का महत्वपूर्ण स्थान है। योग, जिसके द्वारा मनुष्य मस्तिष्क के गूढ़तम रहस्य को सुलझा सकता है, भारत की देन है। पातञ्जल

योग शास्त्र योग की विभिन्न प्रक्रियाओं और मानव शरीर पर उसकी उपादेयता का विशद वर्णन करता है। भाषाशास्त्र और साहित्य के दृष्टिकोण से संस्कृति जैसी समृद्ध दूसरी भाषा अन्य है ही नहीं। संस्कृत ने पूर्वी या पश्चिमी देशों की प्रायः समस्त भाषाओं की उन्नति में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से योगदान दिया है। अन्त में दर्शन की बात आती है जो भारतीय दर्शन के मूलश्रोत वेदों की व्याख्या-रूप में उपनिषद् काल के अनन्त प्रवाह में अडिग खड़ा अपनी ज्योत्सना से विश्व के दार्शनिक एवं तत्व वेत्ताओं का मन मोह लेता है। आधुनिक काल में स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द एवं आचार्य रजनीश के तात्त्विक ज्ञान और दार्शनिक विचारों की काफी कद्र हुई है।

भारतीय संस्कृति के किन-किन तत्वों ने अन्य देशों के विचार, चिन्तन, कला, परिधान, और वेश-भूषा को प्रभावित किया है-का गिनाना कठिन है। स्मरण रहे कि भारतीय संस्कृति की यह देन किसी व्यक्ति, धर्म, जाति या क्षेत्र की न होकर भारत के समस्त निवायियों की उपलब्धि है, बल्कि एक ऐसे राष्ट्र की बहुमुखी अभिव्यक्ति है जिसने हजारों वर्षों से अपनी सांस्कृतिक जड़ों को सुरक्षित रखा है।

भारतीय संस्कृति के पाँच मूलभूत विचार हैं, जिन्हें भारतीय आत्मा का मूल सन्देश कहा जा सकता है। उन पाँच मूलभूत सिद्धान्तों में से पहला सिद्धान्त है-मानव समाज की एकता। ऐसे बहुत कम देश हैं जो राष्ट्रीयता की प्रबल भावना से ऊपर उठकर समस्त मानव जाति को एक समझ सकें हों, उसके उत्थान के लिए चिन्तन किये हों, और जाग्रत रहे हों। केवल भारत ही ऐसा देश है जिसने उन्नीसवीं शती के पुनर्जागरण के बाद आधुनिक अर्थ में राष्ट्रवाद को स्वीकार करने पर भी समूचे मानव समाज को अपना परिवार समझा हो। “बसुधैव कुटुम्बकम्” में यही भाव निहित है, “कृण्वन्तो विश्वमार्यम्” में यही प्रयास छिपा है। भारतीय विदेश नीति के मूल प्रेरणाश्रोत में या पंचशील सिद्धान्त में यही भावना परिलक्षित होती है। सच पूछिये तो आधुनिक विज्ञान ने हमारे ऋषि-मुनियों के स्वप्न को साकार कर दिया है। सारा विश्व यहाँ तक कि अन्तरिक्ष भी सिकुड़कर छोटा हो गया है। दुनिया के किसी कोने को छोटी घटना से हम उद्वेलित हो जाते हैं। जैसे-जैसे समय आगे बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे इस पृथ्वी पर रहनेवाले मानव समाज की बुनियादी एकता की धारणा प्रबल होती जा रही है।

भारत ने सदियों से जो दूसरा सिद्धान्त विकसित किया है, वह है-“सर्व-धर्म समन्वय” या “सर्व-धर्म समभाव”। मानव आदि काल से ही ईश्वर को प्राप्त करने की चेष्टा करता रहा है। समस्त धार्मिक चिन्तनों के मूल में यही जिज्ञासा काम करती रही है। सभी धर्मों के उद्देश्य समान होते हुए भी मार्ग एक दूसरे से विभिन्न रहे हैं। सामान्य जन में यह भावना पनपती रही कि उनका मार्ग सर्वोत्तम है और दूसरे का मार्ग बाधक है। व्यवहार में यही भावना धार्मिक उन्माद बनकर जाति सम्प्रदायों में झगड़ा, दंगा-फसाद या युद्ध का कारण बना। यद्यपि यह कहना अनुचित होगा कि भारतवर्ष में धार्मिक युद्ध या मनोमालिन्य न रहा, तथापि अन्य देशों की तुलना में धार्मिक उन्माद की तीक्ष्णता, उग्रता नगण्य रही। भारतीय संस्कृति ने विभिन्न मार्गों को न केवल मान्यता दी है, अपितु उसे स्वीकार भी किया है। विभिन्न उपनिषदों के विवेचन या उपदेश में भिन्नता होने पर भी महर्षि वेदव्यास रचित “ब्रह्म-सूत्रों” में उनकी एकरसता, समानता अन्वेषण कर लेना भारतीय सभ्यता की निजी उपज है। इसी कारण एकेश्वरवाद,

अनेकेश्वरवाद व नास्तिकवाद पर सभी सम्प्रदायों के सन्त पूजनीय व माननीय रहे हैं। हिन्दू-धर्म बहल भारतवर्ष में लाखों मुसलमान, बौद्ध, जैन, ईसाई, सिख और यहूदी सम्मान के साथ अपनी-अपनी धार्मिक आस्थाओं में विश्वास रखते हैं। साधु-सन्तों, सूफियों की वाणी सभी सम्प्रदायियों के लिये आदर्श वाक्य रहता है।

“ईसा के बाद पहली शताब्दी में ही ईसाई धर्म भारत पहुँच गया। यहाँ कैला और पनपा। उस समय यूरोप को इस धर्म का ज्ञान ही नहीं था। भारत में ईसाई धर्म का कोई विरोध नहीं किया गया। आज भी भारत में ऐसे अनेक ईसाई सम्प्रदाय फल-फूल रहे हैं जिनका यूरोप में दमन कर अस्तित्व ही मिटा दिया गया है। करीब १८०० वर्ष से भी पहले यहूदी भारत आये। उनका भी स्वागत किया गया। फारस से निकाले जाने के बाद पारसी भारत आये तब से फल-फूल रहे हैं। आज एक समृद्ध जाति है। इस्लाम के उदय के तत्काल बाद मुसलमान भारत आये और उनके फकीरों का भी स्वागत किया गया। उन्हें भी अपने धर्म का प्रचार करने का पूरा अवसर मिला। संघर्ष तभी हुआ जब मुसलमान हमलावर विजेता के रूप में आये।” (भारत की एकता—स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू) अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता से ऊपर उठकर सहर्ष स्वीकार करना भारतीय संस्कृति की विलक्षणता है।

मानव एकता और सर्व धर्म समभाव के सिद्धान्तों से सहज उपजा है—आत्मा या स्व की प्रतिष्ठा एवं दिव्यता का सिद्धान्त। भारतीय समाज विभिन्न श्रेणियों, आचार संहिताओं, सामाजिक कर्तव्यों के बंधनों से ऐसा जकड़ा है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ धूमिल पड़ जाता है। सामाजिक आचार संहिताओं के समानान्तर एक और मूलभूत धारणा का अस्तित्व है। वह धारणा शुद्ध दार्शनिक है। किसी भी धर्म, जाति, रंग, भाषा या देश का कोई भी व्यक्ति, स्त्री या पुरुष ईश्वरीय सत्ता का एक अंश है। भारतीय दर्शन का विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति में आध्यात्मिक विकास, पुनर्जन्म या मोक्ष पाने की क्षमता के बीज हैं चाहे कितनी ही विपरीत या विषम परिस्थितियाँ क्यों न हों। मनुष्य के भीतर दिव्यता की एक ऐसी चिनगारी होती है जो आध्यात्मिक ज्ञान की ज्वाला का रूप धारण कर सकती है।

यही विश्वास प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक रीति रिवाजों से श्रेष्ठ स्थान प्रदान करता है। आज के मशीन युग में मनुष्य की प्रतिष्ठा का क्रमशः ह्रास हुआ है और सैकड़ों तरीके से मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रभावित करने का बोझ बढ़ रहा है—इस सन्दर्भ में भारत का सन्देश महत्वपूर्ण हो जाता है।

भारत द्वारा विश्व को दिया गया एक और सन्देश है—कर्मयोग। विश्व में है एक ओर कर्म का संसार, भोग का संसार। दूसरी ओर है—विराग, सन्यास या ध्यान की वह स्थिति जिसमें व्यक्ति स्वयं को बाहरी संसार से अलग कर भीतर समेट लेता है। इसे आध्यात्मिक भाषा में इन्द्रियों की “अन्तर्मुखी प्रवृत्ति” कहते हैं। इसके द्वारा मनोयोग से व्यक्ति देखते हुए भी नहीं देखता है, सुनते हुए भी नहीं सुनता है। प्रवृत्ति या निवृत्ति, विलास या विराग के दो पृथक मार्गों में से भारत गीता के उस समन्वय मार्ग—“कर्मयोग” को मानता है जिसमें कर्म और ज्ञान को अनासक्ति से ईश्वर को पूर्णरूपेण समर्पित कर एक ही माना गया है।

ईशोपनिषद् में एक मंत्र है, जिसका भाव है-जो तैजस् अर्थात् अग्नि, ऊर्जा एक अणु में है वही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में भी है। विश्व में विज्ञान और धर्म के बीच संघर्ष छिड़ा हुआ है। विज्ञान ने धार्मिक आस्थाओं के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया है, लेकिन भारतीय दर्शन यह मानता है कि ये दोनों एक ही सत्य की ओर पहुँचने वाले, दो विभिन्न मार्ग हैं।

हमें अपनी संस्कृति पर गर्व है जो सांसारिक सीमाओं से उठकर बाह्य जगत के अन्वेषण में ही नहीं अपितु समय की गहराइयों तक पहुँचने की क्षमता रखती है।



✱
 ✱ संस्कृत माँ, हिन्दी गृहिणी और अंग्रेजी नौकरानी है। ✱
 ✱ डॉ० कामिल बुल्के ✱
 ✱ हिन्दी और संस्कृत में समस्त भारत की आत्मा ✱
 ✱ मुखरित है। ✱
 ✱ —ओडोसेन स्मेकल ✱
 ✱ अगर हिन्दुस्तान को हमें एक राष्ट्र बनाना है तो ✱
 ✱ राष्ट्रभाषा हिन्दी ही हो सकती है। ✱
 ✱ —महात्मा गाँधी ✱
 ✱

प्रारम्भिक जाँच और नियमित जाँच

श्री एम० एन० हक,
लेखा अधिकारी (प्रशासन)
बिहार, पटना ।

यदि कोई सरकारी कर्मचारी केन्द्रीय असैनिक सेवा (आचरण) नियम १९६४ के किसी भी उपबन्ध का उल्लंघन करता है तो उसके विरुद्ध असैनिक सेवा (वर्गीकरण, नियन्त्रण और अपील) नियम १९६५ के नियम ११ में दिये गये दण्डों में से कोई एक दण्ड उस पर अधिरोपित किया जा सकता है। चूँकि संविधान की धारा ३११ सरकारी कर्मचारियों को संरक्षण प्रदान करती है, इसलिए कोई भी नियुक्ति पदाधिकारी या अनुशासनिक प्राधिकारी जो दण्ड देने के लिए सक्षम हैं, वह मनमाने तौर पर किसी को दण्ड नहीं दे सकते हैं, बल्कि उन्हें धारा ३११ की दो बुनियादी बातों को हमेशा ध्यान में रखना होगा (१) जिस अधिकारी के द्वारा किसी सरकारी कर्मचारी की बहाली हुई है उसका अधीनस्थ अधिकारी न तो उस सरकारी कर्मचारी को पदच्युत कर सकता है और न उसे नौकरी से हटा ही सकता है। (२) उस अभियुक्त कर्मचारी को उस वक्त तक न तो पदच्युत किया जा सकता है। न उसे नौकरी से हटाया जा सकता है और न उसके पद में कमी ही लाई जा सकती है जबतक कि उस अभियुक्त कर्मचारी को जाँच के दौरान उसपर लगाये गये आरोपों को बता न दिया जाए और जबतक कि उसे अपनी बेगुनाही साबित करने का यथोचित अवसर नहीं दिया जाए। अर्थात् संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि किसी भी अभियुक्त कर्मचारी के खिलाफ कोई कार्यवाही करते समय हमेशा प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त को सामने रखना पड़ेगा।

प्रारम्भिक जाँच :—

अनुशासनिक प्राधिकारी किसी भी अभियुक्त सरकारी कर्मचारी (असैनिक) के विरुद्ध नियमित जाँच की कार्यवाही करने के पहले विभाग के किसी अधिकारी या सी० बी० आई० की विशेषज्ञ एजेन्सी के द्वारा प्रारम्भिक जाँच करा सकता है। इस जाँच का उद्देश्य केवल यह होता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी इस बात का निर्णय ले सके कि इस विशेष मामले की नियमित जाँच कराना आवश्यक है या नहीं। इस जाँच के लिये कोई निर्धारित प्रक्रिया नहीं है जिसे जाँच करने वाले अधिकारी को पालन करना आवश्यक है। अभियुक्त कर्मचारी को मामले की छानबीन के दौरान शामिल भी किया जा सकता है और नहीं भी। यह जाँच बिल्कुल अनौपचारिक होती है और इसमें प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त का पालन करना आवश्यक नहीं है। चूँकि इस छानबीन की रिपोर्ट का प्रयोग केवल अनुशासनिक प्राधिकारी ही करता है इसलिए यह गोपनीय अभिलेख होता है और इसका उल्लेख नियमित आरोप पत्र में नहीं होता है।

अनुशासनिक प्राधिकारी प्रारम्भिक जांच का काम स्वयं कर सकता है या किसी दूसरे स्वतन्त्र अधिकारी के द्वारा करा सकता है। वह केवल सच्चाई को जानना चाहता है और अपनी संतुष्टि के लिए जांच कराना चाहता है ताकि वह यह जान सके कि प्रथम दृष्टि में अभियुक्त कर्मचारी के विरुद्ध कोई आरोप साबित होता है या नहीं। जांच अधिकारी संचिकाओं और अभिलेखों का अध्ययन करता है और दूसरे सरकारी कर्मचारियों को मौखिक गवाही के लिए बुलाता है या फिर उनका लिखित बयान लेता है। प्रारम्भिक जांच के दौरान अभियुक्त कर्मचारी का बयान लेना या उससे स्पष्टीकरण मांगना आवश्यक नहीं है। इसके चलते भागे की कार्यवाही निष्फल नहीं हो सकती। जांच की कार्यवाही समाप्त होने के बाद जांच अधिकारी अनुशासनिक प्राधिकारी को अपनी रिपोर्ट पेश कर देता है। प्रारम्भिक जांच की प्रक्रिया केवल अनुशासनिक प्राधिकारी की संतुष्टि के लिए अपनाई जाती है। इसलिए यह गोपनीय होता है और इसकी प्रति अभियुक्त कर्मचारी के द्वारा मांगे जाने पर नहीं दी जा सकती है।

प्रारम्भिक जांच की प्रक्रिया इसलिए अपनाई जाती है कि यह जाना जा सके कि सचमुच कोई अपराध हुआ है या नहीं और प्रथम दृष्टि में सरकारी कर्मचारी मुजरिम नजर आता है या नहीं। यदि प्रथम दृष्टि में अपराध के प्रमाण ऐसे हैं जो युक्त संदेहातीत (beyond reasonable doubt) हैं तो फिर उस अभियुक्त कर्मचारी के विरुद्ध फौजदारी मुकदमा चलाये जाने की व्यवस्था की जाती है। दूसरी ओर यदि प्रथम दृष्टि में पाए जाने वाले प्रमाण ऐसे हैं जिनका आधार प्रचुर संभावनाओं (Preponderance of Probability) है तो फिर ऐसी स्थिति में बड़ा दण्ड देने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। यदि प्रथम दृष्टि में अवचार साफ तौर पर प्रतीत होता है तो सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध कोई निर्णय लेते समय उसके पिछले अच्छे या बुरे अवचार का कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

के० सी० सिंहा बनाम भारत सरकार (ए० आई० आर० १९६३ त्रिपुरा-२०) के मुकदमे में अदालत ने यह निर्णय दिया कि प्रारम्भिक जांच के दौरान लिए हुए बयान को प्रमाण के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, जबतक कि उसके प्रति अभियुक्त कर्मचारी को नहीं दी जाती है और जबतक कि उसे अपनी बेगुनाही साबित करने का पूरा-पूरा मौका नहीं दिया जाता है।

चमन लाल शाह बनाम भारत सरकार (ए० आई० आर० १९६४ एस० सी० १८५४) के मुकदमे में उच्चतम न्यायालय ने यह फैसला दिया कि प्रारम्भिक जांच का उद्देश्य केवल यह है कि यह जाना जा सके कि प्रथम दृष्टि में मामला ऐसा है कि नियमित जांच आवश्यक है। लेकिन प्रारम्भिक जांच के दौरान अभियुक्त कर्मचारी को सुने जाने का मौका देने का अधिकार नहीं है, क्योंकि यह जांच केवल सरकार की संतुष्टि के लिए है। अभियुक्त कर्मचारी को संविधान के अनुच्छेद ३११ का संरक्षण उस वक्त प्राप्त है जब नियमित जांच का निर्णय ले लिया जाए और उसपर बड़ा दण्ड अधिरोपित किया जाए।

ए० जी० बेनजामिन बनाम भारत सरकार (एस० एल० आर० १९६७ एस० सी० १८०) के मुकदमे में अदालत ने यह फैसला दिया कि प्रारम्भिक जांच में कोई दण्डात्मक तत्व नहीं है। इस तरह की जांच कराने का उद्देश्य अस्थायी सरकारी कर्मचारी को दण्ड देना नहीं है, बल्कि यह निर्णय करना है कि उसे सरकारी नौकरी में रखना उचित है या नहीं।

नियमित जांच

जब अनुशासनिक प्राधिकारी इस बात की संतुष्टि कर लेता है कि अभियुक्त कर्मचारी के विरुद्ध पहली दृष्टि में अपराध प्रतीत है तो वह असैनिक सेवा (वर्गीकरण, नियन्त्रण और अपील) नियम ११ में दशयिे गए किसी भी दण्ड को अधिरोपित करने के लिए आरोप पत्र तैयार करता है ।

नियमित विभागीय जांच की कार्यवाही अभियुक्त कर्मचारी को आरोप पत्र दिए जाने के साथ ही शुरू हो जाती है । अग्रेषण पत्र के अतिरिक्त आरोप पत्र के चार खण्ड होते हैं । (१) आरोपों की नियमावली (२) अवचार का विवरण जिन पर आरोप आधारित होते हैं । (३) और (४) आरोपों की हिमायत में कागजी प्रमाणों और गवाहों की सूची । आरोपों का तर्कसंगत और स्पष्ट होना बहुत ही आवश्यक है । इसमें जिस भाषा का प्रयोग किया जाए उसे बहुत ही स्पष्ट, संक्षेप और ऐसा होना चाहिए जिसमें भविष्य में कुरचना नहीं किया जा सके । हर आरोप ठोस होना चाहिए, अस्पष्ट नहीं और उसके समर्थन में पूरे प्रमाण होने चाहिए । इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए कि एक विभागीय भूल को बहुत से आरोपों का रूप नहीं दिया जाए और साथ-साथ यह भी सुनिश्चित हो कि भिन्न-भिन्न विभागीय भूलों को एक आरोप का रूप नहीं दिया जाए । जो आरोप पत्र तैयार किया जाए वह आरोपों के अनुरूप हों । यदि ऐसा नहीं किया गया तो अभियुक्त कर्मचारी लाभ या हानि का सबब बन सकता है । इसके अलावा तमाम तथ्यों को ध्यान पूर्वक बार-बार मिलान कर लें । एक मामले के आरोप पत्र में यह कहा गया कि एक विशेष दिन बहुत जोर की बारिश हो रही थी जबकि मौसम विज्ञान विभाग की रिपोर्ट में केवल दो मिलीमीटर वर्षा रिकार्ड की गयी थी जिसे किसी भी तरह भारी वर्षा नहीं कहा जा सकता है । एक दूसरे मामले में एक विशेष स्टेशन से कोई भी रेल गाड़ी नहीं छुटी थी लेकिन आरोप पत्र में इसका जिक्र था । इन बातों से यह स्पष्ट है कि आरोप पत्र तैयार करने वाले अधिकारी ने मामले की तमाम बातों को ध्यान पूर्वक मिलान नहीं किया था । ऐसे ही एक अन्य मामले में एक बरिष्ठ अधिकारी पर यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने बिना प्रथम वर्ग में यात्रा किए गलत यात्रा त्रिपत्र दिया है । रेल विभाग के रजिस्टर में उनका नाम नहीं था । बाद में छान-बीन के दौरान पता चला कि कौन्ट्रैक्टर की काँपी में उनका नाम है । इस प्रकार तीनों ही मामलों में आरोप पत्र बनाने वाले अधिकारी की सावधानी नहीं बरतने के कारण विभाग को नाखुशगवार हालात का सामना करना पड़ा ।

मौत के दरवाजे से (संस्मरण)

श्री बंशीधर मिश्र,
लिपिक

बात आज से लगभग पाँच वर्ष पूर्व की है। उन दिनों मैं अपनी बी० ए० की परीक्षा देकर बड़े भैया के यहाँ छुट्टियों में "गया" गया हुआ था। अगस्त का अन्तिम सप्ताह गुजर रहा था तथा उन दिनों वहाँ मौसम अच्छा नहीं था। उस दिन भी सुबह से लगातार बुँदा-बाँदी हो रही थी तथा मच्छरों का प्रकोप कुछ ज्यादा ही था। घर में मच्छरदानी की अनुपलब्धता तथा छत से लटकने वाली मात्र एक पंखे की उपलब्धता की वजह से हम सभी (भैया, भाभी, दो वर्ष का भतीजा एवं स्वयं मैं) एक ही कमरे में नीचे ही बिछावन पर सोने को बाध्य थे। वह कमरा दूसरे तल्ले पर था तथा इससे लगा एक दूसरा कमरा भी था। भाभी सबसे किनारे इस तरह सोयी थीं कि इनके सिर के पास एक दरवाजा तथा सिर के दाहिने एक दरवाजा पड़ता था। कमरे में बाकी सिर्फ दीवार ही थी। भाभी के बगल में भतीजा तथा भैया सोये थे तथा अन्य मैं सोया था। हम सभी गहरी नींद में सो रहे थे कि करीब दो बजे रात्रि में भाभी काफी जोर से "बापरे" चिल्लाई जिसे सुनकर भैया ने उलटकर अपने सिरहाने ऊपर लगे स्वीच बोर्ड से बिजली जलायी। इसी दरम्यान मेरी भी नींद खुल गयी। मैं उठकर खड़ा हो कुछ समझ ही पाता कि मेरे और दीवार के बीच स्थित दो फुट की दूरी के बीच एक पाँच-छः फुट लम्बा नाग गिरा जिसे कि भैया ने बिजली की सी फुर्ती से भाभी के पैर से मात्र एक वित्ते की दूरी पर फन फैलाये रहने की अवस्था से उठाकर फेंका था। तत्पश्चात् वह नाग हमलोगों को कुछ कष्ट दिए बिना मेरी बाँयों और रेंगता हुआ चला गया तथा कोने में रखे मेरे चप्पल को घेर कर फन फैलाकर बैठ गया तथा जोर-जोर से मुँह फैलाना शुरू किया मानों वह हम सबों को डरा रहा हो। भाभी के कथनानुसार उन्हें अपने पैर में जकड़न महसूस हुआ और अंधेरे में ही उन्होंने वगैर कुछ सोँचे समझे अपने पैर से छुड़ाकर किसी तरह अलग फेंक दिया था। हमलोग धीरे-धीरे किसी तरह कमरे से बाहर निकल गये। तत्पश्चात् उस भयानक नाग को वहाँ इकट्ठी भीड़ बड़ी मुश्किल से मार पाने में समर्थ हुई। इस नाग को तो लोगों ने उस दिन मार दिया पर हम चारों प्राणियों के दिल में पैदा हुई दहसत को वे नहीं शांत कर पाये। मैं तो जल्द ही पटना वापस आ गया पर वहाँ लोग उस डरे में लगातार २२ दिनों तक नहीं सो पाये। आज भी उस दृश्य को स्मरण कर दिल सिहर उठता है।

प्रस्थान

काली

काली

श्री नरेन्द्र कुमार लाल

लेखा परीक्षक

कमर्शियल हेडक्वार्टर्स, पटना ।

प्रिय कुछ पल तो रुक जाने दो ।

थोड़ा प्रकाश हो जाने दो ॥

ये अंधियारी काली बदली ।

औ ठण्डी हवाएँ बहती है ॥

इनकी भाषा में क्या समझूँ ।

शायद रुकने को कहती है ॥

इनको थोड़ा थम जाने दो ।

थोड़ा प्रकाश हो जाने दो ॥

मैं समझ रहा संकेत तेरा

जो समय चक्र पर अंकित है ।

और देख रहा वह मानचित्र

जो इस पथ पर अवलम्बित है ।

मीलों को पत्थर को गिना लूँ

दूरी का भान हो जाने दो ।

इस पृथ्वी की परिभाषा में

वैज्ञानिक यूँ कुछ कहते हैं

जिस बिन्दु से चलते हैं अविरल

उस बिन्दु पे आके मिलते हैं ।

इस खुशी में लौट के आऊँगा

थोड़ा मदहोश हो जाने दो ।

+++++

शिक्षा और मानसिक व्यक्तित्व

श्री अशोक कुमार श्रीवास्तव

निधि/कृषि-II

यह कहना निर्विवाद है कि सक्षम मानसिक शक्ति का निर्माण स्वस्थ आदतों के निरन्तर अभ्यास द्वारा ही सम्भव है। जीवन में आनेवाली सभी परिस्थितियाँ एवं सभी तथ्य चाहे वे शारीरिक भावनात्मक अथवा सामाजिक हों, मन की शक्ति को प्रभावित करते हैं। मानसिक व्यक्तित्व का निर्माण पाठशालाओं और शिक्षकों द्वारा न होकर मन की विभिन्न प्रतिक्रियाओं एवं आदतों द्वारा होता है। सच तो यह है कि विशेष ढर्रे की शिक्षा देनेवाली कक्षाओं में मानसिक व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता। शिक्षा पाठशालाओं, कालेजों, विश्वविद्यालयों से मिलने वाली वस्तु नहीं बल्कि जीवन से मिलने वाली वस्तु है। जीवन का पहला पाठ हम जन्म के क्षण सीखते हैं और यह क्रम मृत्यु के क्षण तक निरन्तर चलता रहता है।

इस शताब्दी का यह एक अभिशाप ही है कि हमारे व्यक्तित्व का सही विकास नहीं हो पाता है। विद्यालयों, पत्र-पत्रिकाओं, विज्ञापनों आदि के सांचे में ढले व्यक्तित्व को स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। शिक्षा यदि सत्य का संधान है तो बुद्ध के शब्दों में कहना होगा कि हे आनन्द ! अपने दीपक आप बनो ! विचार अथवा व्यवहार के क्षेत्र में दूसरों का अनुगमन करने वालों को कबीरदास जी पहले ही कह गये हैं— “अंधा अंधे ठेलिया दोनों कूप पड़न्त।” शिक्षित होने का अर्थ सूचनाओं का संकलन नहीं है। यदि ऐसा होता तो टेलीफोन डायरेक्टरी शिक्षा की सर्वाधिक उत्तम कृति मानी जाती। वस्तुतः शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को एक ऐसी चाभी देनी होनी चाहिए कि वह अपने आन्तरिक व्यक्तित्व के सारे द्वार उद्घाटित कर सके।

अनेक मानसिक शक्तियाँ हमको जन्म के साथ ही मिलती हैं। उनका समुचित विकास किया जा सकता है। इसका मतलब यह नहीं कि अपने मन को अधिकचरे विचारों, अनावश्यक सूचनाओं, सड़ी गली इच्छाओं की ढेर बना दी जाय। जीवन का एक उद्देश्य निश्चित कर उसके लिये आवश्यक मानसिक तथा शारीरिक व्यक्तियों, शिक्षा और प्रशिक्षण की प्राप्ति में जुट जाइये। शरीर का प्रशिक्षण मस्तिष्क की सहायता के बिना नहीं हो सकता। साथ ही शरीर का संस्कार करने वाला प्रत्येक कार्य मन का भी संस्कार करता है।

शारीरिक और मानसिक विकास के साथ ही भावनात्मक जीवन भी समृद्ध और स्वस्थ होना चाहिये। इसके लिए प्रकृति और वातावरण को दोष देने से ही काम नहीं चलता। भावनाओं का संस्कार बहुत कुछ हमारे हाथ में भी है। इतना सब हो जाने के बाद विभिन्न शिल्पों और कलाओं का उपार्जन आवश्यक होता है ताकि जीवन में हम व्यावहारिक रूप से सफल हो सकें। बीसवीं शताब्दी ने अगणित शिल्पों और कलाओं के द्वार हमारे लिये खोल दिये हैं। अपनी रुचि, शक्ति एवं महत्वाकांक्षा के अनुरूप हम उनमें से किसी का निर्वाचन करने को स्वतन्त्र हैं। यह भूल कर भी मत सोचिये कि आपकी नयी-नयी बातें सीखने की उम्र चली गयी है या आपको कुछ शेष नहीं है। बुरे-भले की पहचान निर्णय करने की शक्ति जैसे कुछ गुण हमारी सफलता या असफलता का निर्णय करते हैं। अपनी शक्तियों से हमें पूर्णतः परिचित होना चाहिये। आत्मविश्वास, सफलता का दूसरा नाम है किन्तु आत्मविश्वास को हठवादिता या कठमुल्लापन समझने की भूल मत कीजिए।

हिन्दी का शृंगार राष्ट्र के सभी भागों के लोगों ने किया है, वह हमारी राष्ट्रभाषा है।
—चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार कर लिए जाने के बाद किसी को उसके विरुद्ध आवाज उठाने का अधिकार नहीं है।
—कृष्ण मेनन

हिन्दी अपने गुणों से देश की राष्ट्रभाषा है।
—लाल बहादुर शास्त्री

हिन्दी ज्ञान दीपिका

निम्नलिखित अनुच्छेद को सावधानी से पढ़िए । इसमें पच्चीस गल-
तियाँ हैं । कृपया हिन्दी में अपनी दक्षता गलतियों को पता लगाकर
देखें।

“बुरा मर्ज हैं, बहौत ही बुरा । वह धन, जो भोजन में खर्च
होने चाहिए । बाल-बच्चों का पेट काटकर गहनों के भेंट कर दिया
जाते हैं । बच्चों को दुध न मिले न सहि । धि की गंध तक उनका
नाक में न पहुँचे, न सही । मेवों और फलों का दर्शन उनको न हों,
कोइ परवा नहीं ; पर देवि जो गहनें जरूर पहनेंगी और सवामी जी
गहनें जरूर बनवायेंगे । दस-दस, बिस-बिस रूपए पाने वाले को
देखता हूँ, जो सड़ा हुआ कोठरीयों में पशूओं की भाँति जीवन काटते
हैं, जिन्हें सबेरे का जलपान तक मयस्सर नहिं होता, उन पर भी गहनों
की शनका शवार रहति है । इस परथा से हमारा सर्वनास होते जा
रहा है ।

६ तक गलतियों को पकड़ने वाले

७ से १२ तक गलतियों को पकड़ने वाले

१३ से १८ तक गलतियों को पकड़ने वाले

१९ से २५ तक गलतियों को पकड़ने वाले

— साधारण

— कुशल

— प्रवीण

— दक्ष

श्री "क" कविता के दर्पण में

शाब्बीर हुसैन "शाब्बीर"

श्री "क" की कविता के बारे में मुझे अपना विचार प्रकट करना है और मैं इस उलझन में हूँ कि क्या कहूँ। यदि विचार प्रकट न कर सका तो डर है कि वे मेरे बारे में नहीं लिखेंगे या फिर मुझे अपने यहाँ के कवि सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमन्त्रित नहीं करेंगे। अर्थात् मैं उनकी प्रशंसा कहूँ और वे मेरी। यह मामला था रचना भी ऐसी हो कि उनकी सलाहियत को उजागर करने के लिए आकाश और पृथ्वी की कड़ी मिला देनी पड़े तथा कुछ नए शब्दों का प्रयोग करना पड़े जिन्हें अबतक किसी ने नहीं किया हो। मगर इसके लिए शब्दकोश की मदद लेनी होगी। अंततः शब्दकोश लेकर बैठ गया और उनकी शान में जो उचित शब्द मिले उनको कागज पर उतार लिये ताकि वाक्यों में प्रयोग कर सकूँ।

कलम और कागज लिए और अपने विचारों को प्रकट करने लगा। श्री "क" की कविता में वर्तमान काल का प्रतिविम्ब दिखायी देता है और वह नये-नये शब्दों का प्रयोग बड़े कलात्मक ढंग से करते हैं। उनकी कविता में जिद्दत भी है और जदीदियत भी। यदि यह कहूँ तो गलत न होगा कि उनकी कविता में प्राचीन और आधुनिक का सुहाना संगम है। वैसे तो हर क्षेत्र में उन्होंने अपनी कला दिखायी है, मगर वे मूलतः गजल के कवि हैं परन्तु उनकी नींव कहां तक मजबूत है यह भगवान ही अच्छी तरह जान सकता है। गजल के मानक का कहना क्या है। यदि यह कहूँ तो गलत न होगा कि इस युग के तुलसीदास हैं। वैसे भी श्री "क" और तुलसीदास में केवल "क" और "त" का अन्तर है।

मैंने कुछ छन्द श्री "क" से मांग लिए थे ताकि उन्हें उनकी प्रशंसा में प्रयोग कर सकूँ। मैं उन छन्दों के आलोक में कह सकता हूँ कि उनकी कविता में वर्तमान काल का दर्द भी है और इस युग की बुराइयों की तरफ संकेत भी। दर्द किस हद तक है, वह इलाज के काविल है कि नहीं या लाइलाज है, यह उनकी कविता से पता चलेगा। आज का आदमी अपने स्वयं के घर में सिमट कर रहा गया है और स्वार्थ उसका लक्ष्य बन गया है। स्वार्थ का शिकार (आखेट) दुबला है या मोटा यह वे ही जानें। हाँ, मैं यह कह सकता हूँ कि उपर्युक्त की जमानत में श्री "क" का निम्नलिखित छन्द प्रस्तुत किया जा सकता है।

दिल दुखाना तो सबको आता है

दिल लुमाने की कुछ बात करो।

हर तरफ अंधेरा है

कब हुआ सवेरा है।

छन्द सही है कि नहीं यह मैं आप पर छोड़ता हूँ, चूँकि मुझे इसकी सही जानकारी नहीं है।

श्री "क" के यहां विचार उच्च कोटि का मिलता है। वे स्वयं कितने उच्च हैं यह बताने में मैं असमर्थ हूँ क्योंकि मैंने कभी उनकी लम्बाई टेप से नापी नहीं है। उन्होंने जीवन को निकट से देखा है या फिर जीवन ने उनको निकट से देखा है। जो भी हो वे जीवन की सच्चाई से अवगत हैं। जीवन और ब्रह्माण्ड पर अपनी सोच से काम लिया है बल्कि इस तरह कहें कि उनके हौजे में गोता लगाया है।

श्री "क" की कविता में विचार स्वयं अपने आप चले आते हैं, बल्कि यह कहें कि वे कविता के रस में डूबे हुए मालूल होते हैं। लेकिन इसमें दूसरे कवि का छन्द कितना है यह आप समझें। चूँकि चोरी का जमाना है और बहुत से कवि ऐसे हैं जो केवल चोरी पर ही निर्भर करते हैं। वैसे उनकी कविता दिल की आवाज है। आवाज अच्छी है या बुरी, ये तो सुनने से सम्बन्ध रखता है। उनकी कविता में साम्प्रदायिकता की ओर भी संकेत है, लेकिन इसके पक्ष में हैं या विपक्ष में, यह उनकी कविता ही बतायेगी। ऐसा लगता है कि अपने देश को महान बनाना चाहते हैं और शान्तिप्रिय हैं। निम्नलिखित मुक्तक इस सन्दर्भ में प्रस्तुत कर रहा हूँ—

कैसे बाहर निकल सके कोई

शोला नफरत का उठ रहा है यहाँ

जिन्दगी खाक बन रही है अब

जिस तरफ देखिए धुआँ ही धुआँ

उनकी कविता स्पष्ट होती है या स्पष्ट हो जाती है यानी वे साफ कहते हैं या स्वयं साफ हो जाते हैं। "साहिर" की तरह दुनिया ने जो उन्हें अनुभव दिया है वे उसे लौटा रहे हैं। श्री "क" न केवल कवि हैं बल्कि रचनाकार, आलोचक तथा शोधकर्ता भी हैं। उन्होंने कभी अपना शोध किया है कि नहीं यह वही बता सकते हैं। मैं यह कह सकता हूँ कि एक ही साथ बहुत सी खूबियों के वे मालिक हैं।

श्री "क" ने अपने विचार को कहां तक परखा है यह वे जानें। यदि किसी जौहरी से भेंट हो गई होगी तो अवश्य परखा होगा या परखने की उससे विनती की होगी। वे वातावरण को प्रभावित करते हैं कि नहीं या वातावरण से प्रभावित होते हैं कि नहीं—यह आने वाली पीढ़ी ही बता सकेगी।

उनकी कविता में गहराई है। गहराई कितनी है इसको मैंने नापा नहीं है। उनकी कविता में संवाद भी और अंजाम की ओर संकेत भी है। स्वयं कविता का अंजाम या कवि का अंजाम यह मैं नहीं समझ सका हूँ। श्री "क" को कला पर दावा है। कला भी कई तरह के होते हैं। कविता कहने की कला, दूसरों की राह पर चलने की कला या दूसरे की कविता को अपनी कविता कहने की कला। अब यह किस कोटि में आयेंगे यह आप समझें क्योंकि इसमें ही महारत है कविजी को।

जितने शब्द मैंने शब्द कोश से लिए थे वे सब प्रयोग कर लिए गए, इसलिए मैं समझता हूँ कि रचना पूरी हो गई है। मैंने पत्रिका के सम्पादक के पास इसे भेज दिया और उनसे अनुरोध किया कि इसे जल्द ही छाप दें। सम्पादक ने वादा किया। मैंने एक पत्र श्री "क" को भी लिख दिया कि आप पर मेरी एक रचना आ रही है देखना न भूलेंगे।

रचना पढ़कर श्री "क" बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने मेरे पास पत्र लिखा कि आपका मैं आभारी हूँ। आपकी बहुत अच्छी रचना हम पर है। अब मुझे यकीन हो गया कि वे मुझे अपने यहाँ के कवि सम्मेलन में अवश्य आमन्त्रित करेंगे। लेकिन जब पत्रिका का दूसरा अंक देखा तो मेरे होश उड़ गये। श्री "क" की कविता की धज्जी उड़ा दी गयी थी। मैं बड़ा लज्जित हुआ। लोगों ने लिखा कि जो छन्द श्री "क" के दिए गये हैं वे सही नहीं हैं,

जैसे— बिल दुलाना तो सबको आता है,
दिल लुभाने की कुछ बात करो।

दूसरी पंक्ति गलत है। श्री "क" अभी नए कवि हैं जिन्हें छन्द भी सही नहीं लिखने आता और चले हैं अपनी कविता पर विचार प्रकट कराने। आजकल लोग भी कैसे हैं कि अपने स्वार्थ में नये लिखने वाले की गलत प्रशंसा करते हैं। श्री "क" को किसी कला के गुरु से अपनी कविता दिखा लेनी चाहिए अन्यथा लोग उनकी कविता से गुमराह हो जायेंगे। पत्रिका वाले कवि तो होते नहीं हैं जो यह समझें कि कविता सही है कि नहीं या फिर उन्हें इतनी मूहलत कहाँ मिलती है। यदि कविता गलत होती है तो लोग सम्पादक के सर डाल देते हैं। यह तो कहिए कि सम्पादक की कोई आलोचना नहीं आती है वरना बात बिगड़ जा सकती है।

पत्रिका का जब तीसरा अंक आया तो श्री "क" जरा बिगड़े हुए थे। उन्होंने लिखा था कि वे चालीस साल से कविता पाठ कर रहे हैं और लोग उन्हें कविता सिखाने चले हैं। देश के बड़े-बड़े आलोचकों ने उनकी कविता को सराहा है और अब इस उम्र में वे पहुँच चुके हैं कि उन्हें किसी गुरु की आवश्यकता नहीं है। वे अपनी कविता से सन्तुष्ट हैं। वे झूठी शोहरत नहीं चाहते हैं। यह और बात है कि वे किसी कालेज या युनिवर्सिटी के प्रोफेसर नहीं हैं, मगर कविता उनकी जागीर नहीं है कि वे ही कर सकते हैं।

अब क्या था पत्रिका में सवाल और जवाब का सिलसिला चलता रहा। कोई कवि के पक्ष में लिखता तो कोई विपक्ष में। शब्दों के बौछार प्रारम्भ हो गए। एक दूसरे पर कीचड़ उछाला जाने लगा। इसकी सम्भावना थी कि लोग एक दूसरे के आमने-सामने होते तो हाथ और पैर भी चलाने लगते। पाठक की दिलचस्पी का सामान पैदा हो गया और हर अंक दिलचस्पी से पढ़ा जाने लगा। कुछ लोग अच्छे भी थे जो इन बातों को बुरी कहते थे कि भाषा के क्षेत्र में छीछालेदर से काम न लिया जाए।

आग बड़ा शीतल है

सुरेश्वर दयाल,
पर्यवेक्षक

कलिकाल के प्रभाव से
ग्रस्त हैं हम सभी

मजाल है कि सच को
स्वीकार हम करें कभी

काय क्रोध लोभ मोह
चरम है ये सारे
बुद्धि का विवेक लती
बने पड़े हैं बेचारे

काजल की कोठरी यह

बहुरूपिणी भयावह है

दमयन्ती स्वयंवर में

विष्णु क्या नारद है

कांच बना हीरा है

सोना तो पीसल है

अनीति फूट हिंसा की

आग बड़ा शीतल है

सबमें उसी का नाम हो

श्री सुरेश्वर दयाल,

पर्यवेक्षक

उम्र नहीं ढलती है

जोश कम होता है

जीवन-लक्ष्य कम में

उत्साह सिद्ध होता है

जीवन-पथ बनता है

कर्म के प्रताप से

बढ़ता भी आती है

बल व विश्वास से

जाना यदि उत्तर है

राह धरें उत्तर ही

जोगाड़ जो भी चाहिए

ध्यान दे सही-सही

जीवन के मोड़-मोड़ पर

इष्ट का ही नाम हो

होमी सफलता क्यों नहीं

सबमें उसी का नाम हो

हि माफ़ कि मिह मिह

मौत के दरवाजे से

संस्मरण

(आप बीती-आप कहानी)

श्री राजेन्द्र प्रसाद शास्त्री,
लेखाधिकारी

सूर्य का प्रकाश बनै:-सने क्षितिज से उभरा, स्वर्णिम आभा क्रमशः तेज हुई और स्वच्छ दिन प्रकट हुआ पर वह था शनिवार।

मैं उन दिनों राज्य सरकार के कार्यालय में प्रतिनियुक्त था। नियत समय पर घर से कार्यालय के लिए चल पड़ा। राह में छोटा बेटा घर वापस आता हुआ मिला और बोला, पिताजी, बस छूट गयी है, स्कूल जाना आवश्यक है, और आज गणित की परीक्षा है। मैंने सोचा स्कूटर तेज चलाकर समय की कमी पूरा कर लूँगा और अपने लड़के को केन्द्रीय विद्यालय, कंकड़बाग, पटना-२० पहुँचा कर अपना कार्यालय करीब ठीक समय पर पहुँच जाऊँगा।

बच्चे को लेकर फुर से उड़ गया, स्कूटर जो नया था। केन्द्रीय विद्यालय पहुँच गया। स्कूल के फाटक पर स्कूटर से बच्चे को उतारा। प्रार्थना के लिए बच्चे पंक्तिबद्ध हो चुके थे। प्रार्थना प्रारम्भ होनेवाली थी। मेरा पुत्र कतार में लगने के लिये दौड़ पड़ा, उसे भय था कि देर होने से कतार से बाहर खड़ा होना होगा।

मैं स्कूटर पर बैठा, प्रार्थना-स्थल की ओर दौड़ कर जा रहे बच्चे को देखने में लगा था कि तेज प्रकाश और चट-चट की आवाज ने मेरा ध्यान बरबस खींचा। मेरे ठीक ऊपर बिजली का सामान्य एवं उच्च वोल्टेज के विद्युत प्रवाह वाला बिजली का तार तना था। देखता हूँ मि सामने से एक मोटा तार टूट कर अपने मुख से आग की तेज लौ लपलपाते विद्युत् गति से मुझे चपेट में समेटने लटकता आ रहा है। मेरे रोंगटे खड़े हो गये। किकर्तव्यविमूढ़ हो गया। मौत की साया आंखों के पलक मारने भर की दूरी पर खड़ी थी। स्कूटर को लेकर भागने की इच्छा हुई। तत्क्षण विचार कौंधा "किस लोभ में पड़ा है तू"। न जाने कहाँ से विवेक ने झकझोरा। मैं चट जमीन पर सोकर लोटपोट करते एक दो हाथ दूर भागता हूँ। जमीन पर लेटे हुए ही देखता हूँ कि मृत्युपाशमय विद्युत्-तार मेरे पटकaye स्कूटर को माला बनकर लपेटे है। मेरी आँखें बन्द हो जाती हैं। मन ही मन जगन्नियन्ता जगदीश्वर को स्मरण करता

उनकी असीम अनुकम्पा के भार से सस्तक उनके चरणों में स्वतः झुक जाता है। मेरी आँखें नुकीली हैं। कुछ देर बाद खासी भीड़ चारों तरफ इकट्ठी है। उसे देखकर हिम्मत बढ़ती है, मैं उठ बैठता हूँ, लोग अचम्भे में हैं। वे तो दौड़कर इस आशंका से दूर खड़े हैं कि मैं तो बिजली की चोट से काल कबलित हो गया हूँ। कुछ सहृदय व्यक्ति मुझे उठाकर कुशल क्षेम पूछते हैं। डॉक्टर की सहायता से विद्युत तार के पास से स्कूटर को मुक्त कराते हैं और सड़क के पार चाय की दुकान पर ले आकर बैठते हैं।

अल्प विश्राम के पश्चात् मन में स्थिरता आती है। क्षतिग्रस्त स्कूटर से घर वापस आता हूँ। बन्धु-बान्धवों को दुर्घटना की जानकारी मिलती है। कोई कहता है, आज दिन सति है, कोई कहता है नये स्कूटर की पूजा नहीं की थी, पर मैं जानता हूँ कि प्रार्थना-उपासना के बाद ही तो घर से निकला था।

समाप्त

हमारे देश में हिंदी भाषा का विकास होना चाहिए। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करना चाहिए। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी।

हमारी राष्ट्रभाषा की गंगा में देशी और विदेशी
सभी शब्द मिलकर एक हो जाएंगे।

—डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

राष्ट्र को राष्ट्रध्वज की तरह राष्ट्रभाषा की
आवश्यकता है और वह स्थान हिन्दी को प्राप्त है।

—अनन्त गोपाल शेरवड़े

हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकार करने से देश में एकता और समरूपता आएगी।

(१४)

“केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए हिन्दी प्रशिक्षण की अनिवार्यता और उनके लिए सुविधाएँ एवं प्रोत्साहन
(वार्षिक कार्यक्रम १९८९-९० से उद्धृत अंश)

१.१ हिन्दी में प्रशिक्षण की अनिवार्यता

जबतक सभी सरकारी कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं हो जाता, तबतक केन्द्र में लागू वर्तमान राजभाषा नीति सफल नहीं हो सकती। इसलिए हिन्दी न जानने वाले कर्मचारियों को हिन्दी सिखाना आवश्यक है। राष्ट्रपति के २७ अप्रैल, १९६० के आदेश के अनुसार कुछ श्रेणी के कर्मचारियों को छोड़कर केन्द्रीय सरकार के सभी कर्मचारियों के लिए हिन्दी सीखना अनिवार्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राजभाषा विभाग एक हिन्दी शिक्षण योजना चला रहा है। इन कक्षाओं में नामांकित कर्मचारियों के लिए कक्षा में नियमित रूप से उपस्थित रहना और परीक्षा में बैठना अनिवार्य है। अब केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रणाधीन कंपनियों, निगमों, उपक्रमों आदि के कर्मचारियों के लिए भी हिन्दी का प्रशिक्षण अनिवार्य कर दिया गया है।

१.२ प्रशिक्षण के लिए सुविधाएँ और प्रोत्साहन

हिन्दी प्रशिक्षण पाने वाले कर्मचारियों को अनेक प्रोत्साहन तथा नकद पुरस्कार दिये जाते हैं। (रा०भा० ज्ञापन सं०-१२०११/५/८३-रा०भा० (घ) दिनांक २९-१०-८४)

हिन्दी सीखने के लिए सुविधाएँ एवं प्रोत्साहन सुविधाएँ :

१. पढ़ाई और परीक्षा की कोई फीस नहीं ली जाती।
२. पाठ्य पुस्तकें मुफ्त दी जाती हैं।
३. कक्षाएँ दफ्तर के समय में लगाई जाती हैं।
४. कक्षाओं में आने के मार्ग व्यय की प्रतिपूर्ति की जाती है।
५. परीक्षाओं में बैठने के लिए नियमानुसार यात्रा भत्ता/वास्तविक खर्च दिया जाता है।
६. परीक्षाओं के लिए विशेष सुविधाएँ दी जाती हैं।
७. राजपत्रित अधिकारियों को हिन्दी सिखाने के लिए अलग कक्षाएँ भी चलाई जाती हैं।

८. कक्षाओं में प्राइवेट रूप से बैठने की छूट है।
९. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की ओर से पत्राचार द्वारा भी हिन्दी पढ़ाई जाती है।
१०. केन्द्रीय हिन्दी संस्थान में २-३ महीने में गहन प्रशिक्षण द्वारा पूरा पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है।
११. निर्धारित परीक्षा पास करने पर सेवापंजी में इन्दराज किया जाता है।
१२. नकद और एकमुश्त पुरस्कारों पर आयकर नहीं लगता।

प्रोत्साहन

(क) वयक्तिक वेतन (१२ महीने के लिए एक वेतन-वृद्धि के बराबर)

१. अराजपत्रित कर्मचारियों को प्राज्ञ परीक्षा पास करने पर।
२. जिन अराजपत्रित कर्मचारियों के लिए प्रवीण या प्रबोध की परीक्षा ही अन्तिम परीक्षा है, उक्त परीक्षाएँ पास करने पर।
३. राजपत्रित अधिकारियों को अन्तिम रूप में प्रवीण या प्राज्ञ परीक्षा पास करने पर।
४. जहाँ हिन्दी शिक्षण योजना के केन्द्र नहीं हैं वहाँ के कर्मचारियों को स्वैच्छिक हिन्दी संगठनों की मैट्रिक या उससे उच्च स्तर की मान्यता प्राप्त हिन्दी परीक्षा पास करने पर।

(ख) नकद पुरस्कार (विशेष योग्यता के साथ परीक्षा पास करने पर)

प्रवीण और प्राज्ञ	प्रबोध	नकद पुरस्कार के लिए पात्रता
३०० रु०	२०० रु०	७०% या अधिक अंकों पर
२०० रु०	१०० रु०	६०% या अधिक अंकों पर
१०० रु०	५० रु०	५५% या अधिक अंकों पर

(ग) एकमुश्त पुरस्कार (निम्नी प्रत्यक्षों से परीक्षा पास करने पर।)

१. प्रचालन कर्मचारियों तथा उन कर्मचारियों को, जो ऐसे स्थानों पर नियुक्त हैं, जहाँ हिन्दी शिक्षण योजना के केन्द्र नहीं हैं:-

प्राज्ञ	प्रवीण	प्रबोध
३०० रु०	२५० रु०	२५० रु०

२. जहाँ हिन्दी शिक्षण योजना के केन्द्र नहीं हैं वहाँ के कर्मचारियों को स्वैच्छिक हिन्दी संगठनों की मैट्रिक या उच्च स्तर की मान्यता प्राप्त हिन्दी परीक्षा पास करने पर-३०० रुपये।



कुछ महत्वपूर्ण युग्म - शब्द

१ अंत—समाप्ति

अंत्य—नीच, अन्तिम

२ अन्न—अनाज

अन्य—दूसरा

३ असन—भोजन

आसन—बैठने की वस्तु

४ आरति—विरक्ति, दुःख

आराति—शत्रु

आरती—धूप-दीप दिखाना

५ आकर—खान

आकार—रूप, सूरत

६ आयत—लम्बा-चोड़ा

आयात—बाहर से आना

७ इत्र—सुगन्ध

इतर—दूसरा

८ उपल—पत्थर

उत्पल—कमल

उपला—गोइठा

९ ओसर—अवसर

ऊसर—बंजर भूमि

१० कश—चाबुक

कष—कसौटी

कस—दबाव, बल

११ कृत—किया हुआ

कीत—खरीदा हुआ

१२ गुड़—शक्कर

गूढ़—गंभीर

१३ अरि—पशु

अरी—हुरा चारा, अरने की क्रिया

१४ जलद—बादल

जलज—कमल

१५ टोटा—घाटा

टोटा—बन्दूक का कारतूस

१६ तरंग—लहर

तुरंग—घोड़ा

१७ दिन—दिवस

दीन—गरीब

१८ देव—देवता

देव—भाग्यनी

१९ नाहर—सिंह

नहर—सिंचाई के लिए निकाली गई कृत्रिम नदी

२० व्रण—घाव

वर्ण—रंग

वरण—बुनाव

अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्यायों की संक्षिप्त सूची

1. Face Value	अंकित मूल्य ।
2. Face amount	अंकित राशि ।
3. Factual data	तथ्यपूर्ण आधार सामग्री ।
4. Failing which	न हुआ तो ।
5. Faciity	आसानी, सुविधा ।
6. Facsimile	प्रतिकृति, अनुलिपि ।
7. Factual Statement	तथ्यात्मक विवरण ।
8. Famine relief	अकाल सहायता ।
9. Festival advance	उत्सव अग्रिम, त्योहार पेशगी ।
10. Free furnished residence	किरायामुक्त सज्जित मकान ।
11. Gain	मुनाफा ।
12. Gallantry award	शौर्य पुरस्कार ।
13. Gallery	वीथी, दीधिका, दीर्घा ।
14. Gate pass	प्रवेश-पत्र, द्वार-पत्र ।
15. General circular	सामान्य परिपत्र ।
16. Grant-in-aid	सहायता अनुदान ।
17. Gratuity	उपादान ।
18. Gross amount	सकल राशि, कुल रकम ।
19. Gross negligence	घोर प्रमाद, भारी गफलत ।
20. Guide book	संदर्शिका, गाइड-पुस्तक, परिदर्शिका ।

जिंदगी का पताहन्ती के जिंदगी के पता

कुमारी सुमन तिग्गा,

वरिष्ठ लेखाकार, पेंशन - १२

दूर क्षितिज के पास

सुनसान पहाड़ियों पर

एक कब्र देखा था

लोग कहते हैं, कोई थका मुसाफिर था

पनाह ढूँढता था ।

+

मील का पत्थर

उड़ा न सकीं जिसे आँधियां

जला न सकीं जिसे बिजलियाँ

हटा न कहीं, वहीं पर स्थिर

खामोश पड़ा रहा,

वह मील का पत्थर

+

जिंदगी और मौत

चार दिन की जिंदगी में

किसी मंजिल की तलाश में

भटकता है वह मानव

जिंदगी से लेकर मौत तक ।

++++

भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन (वाणिज्यिक),

बिहार सरकार से उद्धृत कुछ रुचिकर मुद्दे

५ क. १. सरसों तेल की बिक्री :

राज्य सरकार के अनुरोध पर (अप्रैल १९८१) कम्पनी ने उपभोक्ताओं/खुदरा विक्रेताओं को बेचने के लिए कलकत्ते की एक फर्म से ३.६९ करोड़ रुपये की कुल राशि पर २३१२ टन सरसों का तेल खरीदा। तेल की बिक्री "न लाभ न हानि" आधार पर इस समझदारी के साथ आधारित थी कि तेल के निपटारों में हुई हानि की प्रतिपूर्ति राज्य सरकार द्वारा की जायगी। कम्पनी ने विक्रय मूल्य १५ किलो ग्राम के प्रति टिन के लिए १७ रुपये प्रति किलो ग्राम की दर पर २५५ रुपये निर्धारित किया। तेल की अधिप्राप्ति के समय कम्पनी ने तेल के इस मार्के के प्रति उपभोक्ताओं की प्राथमिकता की सीमा का अध्ययन नहीं किया। तेल के भण्डार की बहुत हद तक खपत नहीं हुई। सितम्बर १९८१ तक मात्र २३ टन की अल्प मात्रा की बिक्री ही हो सकी। बिक्री की गति को तेज करने एवं अन्य राज्यों से आपतियाँ प्राप्त होने पर मूल्य की ह्रासोन्मुख प्रवृत्ति के साथ बाजार में होड़ लेने के लिए कम्पनी ने अपने विक्रय मूल्य में २४६ रुपये प्रति टिन से २३६ रुपये प्रति टिन तक के परास में कई बार कमी की। अक्टूबर १९८१ एवं नवम्बर १९८३ के बीच कम्पनी ने तेल की पूरी मात्रा की बिक्री घटाए गए मूल्यों पर कर दी जिसके फलस्वरूप २८.१२ लाख रुपये की हानि हुई। इसके अतिरिक्त धीमी बिक्री (भण्डार पूर्वानुमानित ६ महीनों की तुलना में ३० महीनों में बिका) के कारण कम्पनी को बिक्री की बढ़ाई गई अवधि के लिए अतिरिक्त व्याज प्रभारों (३९.६४ लाख रुपये) एवं गोदाम भाड़े (१.८९ लाख रुपये) का भुगतान करना पड़ा।

कम्पनी ने अभी तक (मार्च १९८८) सरकार से किसी आर्थिक सहायता का दावा नहीं किया था जिसके कारण अभिलेख में नहीं थे। इस प्रकार तेल के बाह्य मार्के का मूल्यांकन करने में इसकी असफलता के कारण कम्पनी को ६३.६५ लाख रुपये की परिहार्य हानि उठानी पड़ी।

मामले की सूचना कम्पनी को (मई १९८७) एवं सरकार को (अगस्त १९८७) दी गई थी उनके उत्तर प्राप्त नहीं हुए थे (दिसम्बर १९८७)

(भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन १९८६-८७) वाणिज्यिक (बिहार सरकार पृष्ठ संख्या २०१ से उद्धृत)

३. १. ६. अन्य रुचिकर मुद्दे :

परियोजना प्रबन्धन द्वारा एक मनोरंजन भवन के निर्माण से सम्बन्धित कार्य ८४९ लाख रुपए को आकलित लागत पर ठेकेदार "ख" को दिया गया (जून १९८० में) । ठीकेदार को अक्टूबर १९८१ तक कार्य पूरा कर लेना आवश्यक था । ठीकेदार ने अक्टूबर १९८३ में कार्य छोड़ दिया, किए गए कार्य का अन्तिम रूप से मापन के पश्चात् २८९ लाख रुपए का भुगतान कर दिया गया । संविदा के दण्ड-प्रावधानों को लागू किए बिना ठीकेदार के दावे को अन्तिम रूप दिए जाने एवं उसके बयानों के रुपए और जमानत की रकम को मुक्त करने के कारण अभिलेख में नहीं थे । परियोजना प्रबन्धन द्वारा अवशिष्ट कार्य का आकलन १५.५४ लाख रुपए के लिए तैयार किया गया (मार्च १९८३) । अवशिष्ट कार्य को पूरा करने के लिए संविदा, ठेकेदार "एस" को ९.७९ लाख रुपए पर आबन्धित किया गया । जिसमें इस्पात, सीमेंट का मूल्य सम्मिलित नहीं था । कार्य के कुछ मदों को यथा दीवारों को मजबूत किए जाने के संविदा मूल्य को मुख्य-अभियन्ता (असैनिक) के प्रत्यायोजित अधिकारी के अन्दर रखने के लिए हटा दिया गया । सितम्बर, १९८४ तक ठेकेदार ने ५.२४ लाख रुपए मूल्य के कार्य को पूरा किया । तत्पश्चात् ठेकेदार ने कोई अन्य कार्य नहीं किया । कार्य को मई, १९८४ तक पूरा कर लिया जाना था परन्तु अवधि (नवम्बर १९८४) को मार्च १९८५ तक बढ़ा दिया गया । २२ मई १९८५ को पक्के खम्भों सहित मनोरंजन-भवन की दीवारें ध्वस्त हो गई । निरीक्षण के दौरान कार्यपालक अभियन्ता (असैनिक) ने इस्पात के आधारभूत ढांचों के द्वारा दीवारों को मजबूत नहीं किए जाने को, उनके ध्वस्त होने (२७ मई १९८५) का कारण बताया । जुलाई, १९८५ में मुख्य अभियन्ता द्वारा दीवारों के गिर जाने के कारण हुई हानि को निर्धारित करने एवं उसके कारणों का पता लगाने के लिए एक समिति का गठन किया गया । समिति के निर्णय अभी तक प्रतीक्षित है (अप्रैल १९८७) । इस प्रकार मनोरंजन भवन के निर्माण पर किया ८४९ लाख रुपए का व्यय निरर्थक सिद्ध हुआ ।

(भारत के नियन्त्रक-महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन १९८५-८६) वाणिज्यिक (बिहार सरकार के पृष्ठ ५१-५२ से उद्धृत)

४.२ बिहार राज्य खाद्य एवं असैनिक आपूर्ति निगम लिमिटेड खाद्यानों की हाति-

कम्पनी ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत सार्वजनिक विक्रय हेतु अप्रैल और दिसम्बर, १९८३ के बीच २७०७ क्विंटल लाल किस्म के गेहूँ की अधिप्राप्ति की । विक्रय की समाप्ति तक गेहूँ को कम्पनी की हजारीबाग इकाई के विभिन्न गोदामों में रखा गया था । गेहूँ की कुल २७०७ क्विंटल मात्रा में से मात्र २०८ क्विंटल दिसम्बर १९८३ तक, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से विक्रय हेतु निर्गत किए गए । जनवरी, १९८४ में शेष २४९९ क्विंटल की मात्रा (मूल्य: ४.७५ लाख रुपए) केन्द्र के सहायक महा-प्रबन्धक द्वारा मानवीय उपभोग के लिए अनुपयुक्त पाई गई । सितम्बर, १९८४ में निदेशक मण्डल द्वारा एक स्थाई समिति का गठन यह पता लगाने के लिए किया गया कि किन परिस्थितियों के कारण गेहूँ में खराबी आई, समिति ने खराबी का निम्नलिखित कारण बताया :—

- (१) गोदामों की अवैज्ञानिक स्थिति,
- (२) कम्पनी द्वारा गेहूँ का पर्याप्त प्रभूजन किया जाना चाहिए था लेकिन आवश्यकतानुसार गेहूँ का प्रभूजन नहीं किया गया और
- (३) सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा माँग के अभाव में गोदामों से कम निर्गम होने के कारण खराबी ।

गेहूँ की कुल मात्रा में से २४९९ क्विंटल गेहूँ को मानवीय उपभोग के लिए अनुपयुक्त घोषित कर दिया गया, १००० क्विंटल मई, १९८६ में हजारीबाग स्थित राज्य मवेशीशाला को ९६ रुपये प्रति क्विंटल की दर पर बेच दिया गया ।

गेहूँ की अधिप्राप्ति दर (१९० रुपये प्रति क्विंटल) की तुलना में मवेशी चारे के रूप में क्षतिग्रस्त गेहूँ की बिक्री से ०.९४ लाख रुपये की हानि हुई । जब कम्पनी शेष १४९९ क्विंटल क्षतिग्रस्त गेहूँ को निष्पादित करेगी तो यह हानि और आगे बढ़ेगी ।

इस प्रकरण को कम्पनी और सरकार के पास क्रमशः अगस्त, १९८६ और दिसम्बर, १९८६ में भेज दिया गया था; उनके उत्तर प्रतीक्षित हैं (अप्रिल, १९८७) ।

भारत के नियन्त्रक-महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन १९८५-८६ (वाणिज्यिक) बिहार सरकार के पृ०-६८-६९ से उद्धृत)



‘हिन्दी ज्ञान दीपिका’—शुद्ध रूप

“बुरा मर्ज है, बहुत ही बुरा । वह धन, जो भोजन में खर्च होना चाहिए । बाल-बच्चों का पेट काटकर गहनों की भेंट कर दिया जाता है । बच्चों को दूध न मिले न सही । घी की गन्ध तक उनकी नाक में न पहुँचे, न सही । मेवों और फलों के दर्शन उन्हें नहीं, कोई परवाह नहीं; पर देवी जी गहनें जरूर पहनेंगी और स्वामी जी गहनें जरूर बनवायेंगे । दस-दस, बीस-बीस रुपये पाने वाले को देखता हूँ, जो सड़ी हुई कोठरियों में पशुओं की भाँति जीवन काटते हैं, जिन्हें सबेरे का जलपान तक मयस्सर नहीं होता, उन पर भी गहनों की सनक सवार रहती है । इस प्रथा से हमारा सर्वनाश होता जा रहा है ।

हम हिन्दुस्तानियों का एक ही सूत्र रहे—हमारी
राष्ट्रभाषा हिन्दी, हमारी राष्ट्रलिपि नागरी ।

—रेहाना तैयबजी

भारत में एक भाषा हिन्दी ही राष्ट्रभाषा का
स्थान ले सकती है ।

—डॉ० ग्रियर्सन

हिन्दी का उद्देश्य यही है, भारत एक रहे अविभाज्य,
यों तो रूस और अमरीका, जितना है उसका जनराज्य ।
बिना राष्ट्रभाषा स्वराष्ट्र की, गिरा आप गूँगी असमर्थ,
एक भारती बिना हमारी भारतीयता का क्या अर्थ ।

—राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

हिन्दी देश की गंगा है ।

—राम कुमार भुवालका

हिन्दी से किसी भी भारतीय भाषा को भय नहीं
है, यह सबकी सहोदरा है ।

—महादेवी वर्मा

“राष्ट्रभाषा” की उपेक्षा से देश का भविष्य
अन्धकारमय हो जाएगा ।

—महादेवी वर्मा



“काके शीघ्रं द्यूतकारेषु सख्यं
वलीबे धैर्यं मद्यपे तत्त्वचिन्ता ।
ज्ञाने भ्रान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्ती
राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा ॥”

अर्थात्

“कौए में शुद्धता, जुआड़ी में सच्चाई, नपुंसक में धीरज, शराबी
में यथार्थ बात का विचार, ज्ञान में भ्रम, स्त्रियों में
काम की शान्ति और राजा की मित्रता
किसने देखी अथवा सुनी है ।”

“उदेति सविता रक्तो रक्त एवास्तमेति च ।
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता ॥”

अर्थात्

“सूर्य रक्त वर्ण का ही उदय होता है और रक्त होकर ही अस्त
भी होता है । सम्पत्ति और विपत्ति इन दोनों के ही
अवसरों पर महान् पुरुषों का रूप एक
समान रहता है ।”

“यः स्नातः शीतसितया साधुसंगतिगंगया ।
किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः ॥”

— भगवद् वाल्मीकि मुनि

अर्थात्

“जिसने शीतल और शुभ्र साधु संगति रूप गंगा में
स्नान कर लिया है उसको दान, तीर्थ गमन,
तपस्या और यज्ञ से क्या प्रयोजन है ?”

“श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन, दानेन पाणिनंतु कंकणेन ।
विभाति काया करुणापराणां परोपकारेनंतु चन्दनेन ॥”

अर्थात्

“कान् कुण्डल पहनने से नहीं सोहते, बल्कि शास्त्र-श्रवण करने
से; कंकण से कर शोभित नहीं होते, प्रत्युत दान
देने से; और करुण हृदयवालों की
काया चन्दन से नहीं, वरन
परोपकार से ही शोभती है ।”